मध्य एशिया के खरोष्ठी अभिलेखों में जीवन, समाज और धर्म

उषा वर्मा, एम्. ए.

संस्कृति प्रकाशन
वाराणसी-५

१९५९

प्रकाशक :
श्री योगेन्द्र नारायण वर्मा

मूल्य : ३)

मुद्रक : रामेश्वर पाठक
तारा यन्त्रालय, वाराणसी ।

विषय-सूची

विषय | पृष्ठ

संक्षिप्त संकेत सूची

१—*लेख नं०*	रेप्सनः खरोष्ठी इन्सक्रिपशनस् डीसकभर्ड बाइ सर ए. स्टाईन इन चाइनीज़ तुर्किस्तान, आक्सफोर्ड, भाग १, २, ३, मूल ग्रंथ ।
२—*ट्रान्सलेशन*	बरो, टी० ए० : ट्रान्सलेशन आफ़ दि खरोष्ठी डाक्यूमेंट्स् [redacted] चाइनीज़ तुर्किस्तान, लन्दन, १९४० ।
३—*लैंग्वेज*	बरो, टी०: दि लैंग्वेज आफ दि खरोष्ठी डाक्यूमेन्टस् फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान, कैम्ब्रीज, १९३७ ।
४—*बी० एस० ओ० एस०*	बुलेटिन आफ स्कूल आफ ओरियन्टल एन्ड अफ्रिकन स्टडीज, यूनिवर्सीटी आफ लन्दन, लन्दन ।
५—*जे० आर० ए० एस०*	जरनल आफ दि रायल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन ।
६—*जे० एन० एस० आई०*	जरनल आफ द न्यूमिसमैटिक सोसायटी आफ इन्डिया, वाराणसी ।
७—*आई० एच० क्यू०*	इन्डियन हिस्टोरिकल क्वाटरली, कलकत्ता ।

८—*टेक्सटाईल*	टेक्सटाईल एन्ड गारमेन्टस् फ्राम चाईनीज़-तुर्किस्तान, भारतीय विद्या, भाग-१४, सन् १९५३, पृष्ठ ७५-९४।
९—*ऐक्टा० ओ०*	ऐक्टा ओरिन्टेलिया।
१०—*बुद्धिस्ट रेकार्ड*	एस० वील: बुद्धिस्ट रेकार्ड आफ द् वेस्टर्न वर्ल्ड, भाग १, २।
११—*कौटिल्य*	अर्थशास्त्र, शामाशास्त्री।
१२—*मनु*	मनुस्मृति।

भूमिका

प्रस्तुत निबन्ध में प्राचीन मध्यएशिया के सांस्कृतिक इतिहास के कुछ पहलुओं का चित्रण किया गया है। अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण मध्यएशिया विभिन्न संस्कृतियों का संगम रहा है। परन्तु उस संगम में दो धाराएं स्पष्ट हैं। एक चीन की संस्कृति की और दूसरी भारतीय संस्कृति की।

भारतीय संस्कृति देश की सीमा के बाहर प्रायः बौद्ध धर्म के साथ गई। कुछ साहसी राजकुमार और कुछ उत्साही भिक्षु "*चरथ भिक्खवे चारिकं बहुजन हिताय बहुजन सुखाय*" का आदर्श रख दुर्गम पहाड़ियों को लांघ कर नए नगरों का निर्माण कर मरुभूमि में भी संस्कृतियों के मरु-उपवन बनाए। तकला-मकान की मरुभूमि को परिवृत करता हुआ जिन मार्गों द्वारा चीन का पश्चिमी संसार से आवागमन संबंध रहा, उन मार्गों पर स्थित सभ्यता के प्रतीक कई नगरों के खंडहर जब प्रकाश में आए, और विद्वानों के अथक परिश्रम के फलस्वरूप सैकड़ों लेख चित्र, साहित्यिक ग्रन्थ आदि संगृहीत हुए तब यह निर्विवाद स्पष्ट हो गया कि चीनी तुर्किस्तान और उसके समीपवर्ती प्रदेशों में एक ऐसी फलती-फूलती सभ्यता थी, जिसका स्रोत निस्संदेह बहुत अंशों में भारत की ही संस्कृति थी। यद्यपि सामग्रियों का बहुत अभाव नहीं रहा फिर भी उन सामग्रियों के आधार पर अभी तक मध्यएशिया के सांस्कृतिक जीवन का सांगोपांग विवरण हिन्दी में किसी ने नहीं लिखा है। महापंडित राहुल

सांकृत्यायन की "बौद्ध संस्कृति" और "मध्य एशिया का इतिहास"[1] महत्वपूर्ण देन है। अंग्रेजी में भी विद्वानों का अधिक ध्यान भाषा विज्ञान संबंधी शोधकारियों में ही लगा रहा है। और इसी लिए जब हम एक ओर यह पाते हैं कि चिनी तुर्किस्तान आदि से प्राप्त खरोष्ठी अभिलेखों और साहित्यिक ग्रन्थों की भाषा पर, उनके शब्दों की व्युत्पत्ति और उनकी रचना पर दर्जनों विद्वानों के दर्जनों लेख हैं, दूसरी ओर उन्हीं सामग्रियों के आधार पर वहां के लोगों के जीवन पर लेख ऊंगलियों पर गिनी जा सकती हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसके पहले कि इन सामग्रियों को मध्यएशिया के सांस्कृतिक जीवन को जानने के लिए उपयोग में लाया जा सके, हमें उनके लेखों की भाषा अच्छी तरह समझना चाहिए। इसलिए पश्चिमी विद्वानों ने इस संबंध में जो महत्वपूर्ण काम किया है वह बहुत ही सराहनीय है। इन पश्चिमी विद्वानों में श्री अरेल स्टाईन, इ० जे० रेप्सन, एफ० डब्लू० थामस, ए० एम० बोयर, स्टेन कोनो, एच० डब्लू० बेली, टी० बरो विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

भारतीय विद्वानों में श्री प्रबोधचन्द्र बागची का कार्य सराहनीय है। श्री बागची की पुस्तक "*इन्डिया एन्ड सेन्ट्रल एशिया*" मध्यएशिया और भारत के सांस्कृतिक संबधों के इतिहास के लिए बहुत उपयोगी है। परन्तु फिर भी उक्त ग्रन्थ में श्री बागची ने वहां के सामाजिक जीवन का कोई विशद विवरण नहीं दिया है। इधर कुछ फुटकर लेख श्री रतनचन्द्र अग्रवाल के कई पत्रिकाओं में प्रकाशित किए गये हैं, जिनमें

---

१ "प्रस्तुत निबन्ध के लिखने के समय राहुलजी की 'मध्यएशिया का इतिहास' नहीं प्रकाशित हो पाया था अतः ग्रन्थ में उक्त पुस्तक का कोई जिक्र नहीं आ सका है।

चीनी तुर्किस्तान और समीपवर्ती प्रदेशों के सामाजिक जीवन के कुछ पहलुओं पर ध्यान दिया गया है।

प्रस्तुत निबंध मध्यएशिया के सामाजिक जीवन के सभी मुख्य पहलुओं को एक जगह एकत्र करने का प्रथम प्रयास है। इस निबंध का मुख्य आधार चीनी तुर्किस्तान में प्राप्त खरोष्ठी लेख हैं। अतः स्वभावतः इसका क्षेत्र सीमित है। जहां आवश्यक प्रतीत हुआ वहां तथ्य संबंधी अन्य साधनों की सहायता भी ली गई, जैसे चीनी और भारतीय इतिहास और संस्कृति संबंधी।

समाज के विभिन्न अंगों का समावेश हमने इस निबंध के आठ अध्यायों में करने की चेष्टा की है। चीनी तुर्किस्तान का भौगोलिक स्थान और इन प्रदेशों की प्रादेशिक सीमा का एक संक्षिप्त परिचय "विषय-प्रवेश" में दिया है। पुरातत्व की खुदाई के निर्देशक ए० स्टाइन की खोज का संक्षिप्त इतिहास एवं खरोष्ठी लेख के स्वरूप का विवरण उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर इस अध्याय में किया है। द्वितीय अध्याय में चीनी तुर्किस्तान के समाज के स्वरूप का चित्रण है। इस अध्याय के लिए हमें पर्याप्त सामग्री नहीं मिली, जाति और वर्ण से समाज की व्यवस्था क्या थी, इस संबंध में खरोष्ठी लेखों से कुछ ज्ञात नहीं। लोगों में अपनी संस्कृति और सभ्यता की रक्षा का ज्ञान था। इनकी संस्कृति भारत और चीन की सभ्यता का मिश्रण होते हुए भी अपने ढङ्ग की निराली थी। समाज में संगठन था और लोग अपना उत्तरदायित्व समाज और राज्य के प्रति समझते थे। इन बातों का प्रमाण आगे के अध्यायों से अधिक स्पष्ट होता है।

"परिवार" इस निबंध का तीसरा अध्याय है। परिवार का स्वरूप भारत के प्राचीन परिवारों से विशेष भिन्न नहीं था। खरोष्ठी लेखों से जो थोड़ा बहुत परिवार का संकेत अन्य प्रसंगों के उल्लेख में मिलता है, उससे ज्ञात होता है कि लोग पारिवारिक जीवन के सुख और शांति के लिए तत्पर थे।

चतुर्थ अध्याय में मैंने स्त्रियों के स्थान का वर्णन किया है। अन्य प्राचीन देशों की भाँति वहाँ के समाज के लिये भी स्त्रियाँ दुःख की मूल थीं। चल सम्पत्ति की भाँति समाज उन्हें लेन-देन की वस्तु समझता था। पाँचवे अध्याय में हमने वहाँ के व्यवसायिक जीवन की व्याख्या की है। खरोष्ठी लेखों से अनुमान होता है कि समाज व्यवसायों के अनुसार विभक्त था। छठाँ अध्याय चीनी तुर्किस्तान के लोगों के वेश-भूषा और उनके रहन-सहन का संक्षिप्त परिचय-मात्र है।

राज्य और समाज निबंध का सातवाँ अध्याय है। अधिकांश लेख राजकीय कार्य के हेतु लिखे हैं। अतः इस विषय पर इन लेखों से पर्याप्त सामग्री मिली है। नृपतंत्रराज्य में राजाओं के प्रति श्रद्धा और भक्ति थी और राजपद देवतुल्य था, जो वहाँ के राजाओं के विशेषण से ज्ञात है। अन्त में वहाँ के धर्म का उल्लेख हमने आठवें अध्याय में किया है। चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों में बौद्ध धर्म की निष्ठा और उसका विकास उस काल के लिए सराहनीय था। चीन में बौद्ध धर्म के प्रचार में मध्य एशिया के भिक्षुओं का स्थान वैसा ही है जैसा भारत के बौद्ध भिक्षुओं का।

इस निबंध के लिखने में काफी सावधानी बरतनी पड़ी है, क्योंकि अभी तक खरोष्ठी लेखों के बहुत शब्द विद्वानों को स्पष्ट नहीं हो पाये हैं और भाषा की बनावट भी अभी बहुज्ञात नहीं

हो सकी है। हमने इसीलिए अधिक से अधिक मूल संदर्भों को देने का प्रयत्न किया है, जिससे मुझे आशा है कुछ विवादग्रस्त विषयों पर अच्छी तरह सोचा जा सके।

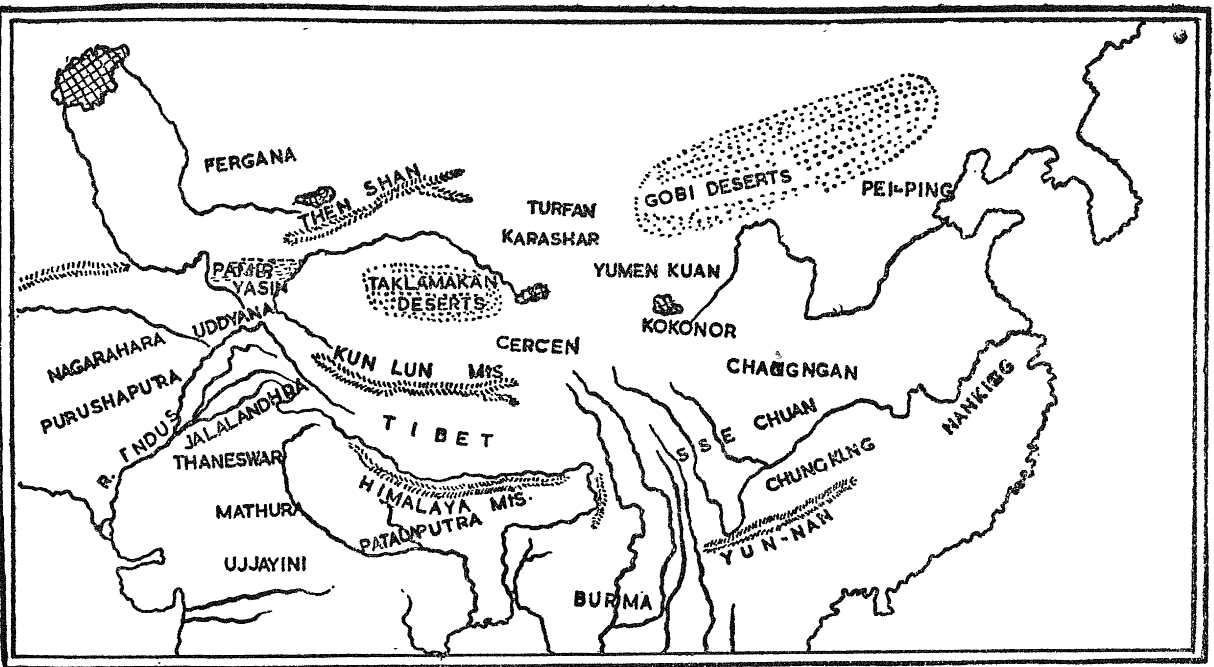
समाज के सभी पहलुओं पर समान रूप से प्रकाश लेखों से नहीं मिल सका। फलतः इस निबंध के सभी विषयों पर समान विस्तार से नहीं लिखा जा सका है। उदाहरण स्वरूप शिक्षा है। लोग शिक्षित थे, इसका प्रमाण खरोष्ठी लेख ही है, जिसे वहाँ के लोगों ने ही लिखा। लेख की भाषा और शैली शिक्षित समाज का ही परिचायक है, किन्तु इतना ज्ञात होते हुए भी हमें खरोष्ठी लेखों से यह नहीं मालूम होता कि शिक्षा का समाज में कैसा प्रबन्ध अथवा क्या स्थान था।

यह निबन्ध प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति में एम० ए० परीक्षा के लिये लिखा गया था। इस विषय को लेने का सुझाव आचार्य डा० राजबली पाण्डेय, काशी विश्वविद्यालय के भारती महाविद्यालय के प्रिन्सपल ने दिया था। साथ ही डा० अवध किशोर नारायण ने हमें विषय के अध्ययन में आदि से अन्त तक सभी प्रकार की सहायता देकर इस निबंध को सार्थक बनाने की चेष्टा की। मैं इन गुरुजनों के प्रति अपनी विनीत श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ।

वाराणसी
वैशाखपूर्णिमा १९५९

उषा वर्मा

MAP OF CENTRAL ASIA



अध्याय-प्रथम

विषय-प्रवेश

'अन्तरंग एशिया' के नाम से प्रख्यात चीनी तुर्किस्तान चारों ओर ऊँचे-ऊँचे पर्वतों से घिरा है। उत्तर में 'तियेन-शान' के ऊँचे पर्वत, दक्षिण में "कुन-लुन" पर्वत की घाटियां, जो मध्य-एशिया को तिब्बत से विभाजित करती हैं, पूरब में 'गोबी' मरुस्थल की सीमा, और पश्चिम में "पामीर" से घिरा 'तकलामकान' मरुभूमि के चारों ओर के प्रदेश चीनी तुर्किस्तान के अन्तर्गत आते हैं। प्रायः १५०० मील पूरब से पश्चिम और ६०० मील उत्तर से दक्षिण तक के क्षेत्र में चीनी तुर्किस्तान के प्रदेश फैले हैं। चीनी तुर्किस्तान के चारों ओर स्थित पर्वतों से कई नदियां निकलती हैं, जो 'तकलामकान' मरुस्थल की ओर जाती हैं और अन्त में इसी मरुस्थल की राह में सूख जाती हैं। काशगर-नदी और यारकन्द-नदी क्रमशः 'तियेन-शान' और पामीर से निकलती हैं। दोनों नदियाँ मिल कर तारिम नदी हुई, जो 'लोब-नोर' तक जाती हैं। भारतीय साहित्य में यही नदी 'सीता' के नाम से प्रख्यात है। तारिम नदी ही तारिम सरित् क्षेत्र, (बेसिन) के छोटे-छोटे प्रदेशों को प्राचीन काल से संभालती रही है।[1]

भूगोल

सभ्यता और संस्कृति की दृष्टि से श्री बागची ने तारिम सरित् क्षेत्र के प्रदेशों को सर्वप्रथम दक्षिणी और उत्तरी भागों में

१—पी. सी. बागची, इण्डिया एण्ड सेन्ट्रल एशिया, पृष्ठ ४३।

विभाजित किया है।[1] पुनः दक्षिणी प्रदेशों के तीन भाग किए गए हैं—१. काशगर और इसके पड़ोसी प्रदेश, २. खोतान और पड़ोसी प्रदेश, तथा ३. लोब-नोर का प्रदेश। पामीर के दो प्रदेशों, सरिकोल और वु-शा, की सभ्यता काशगर की ही सभ्यता है। अतएव इनकी गणना काशगर के अन्तर्गत की जा सकती है।

उत्तरी प्रदेशों में कूची, अग्निदेश, कारशर और तुरफान, प्रदेशों का समावेश है।

काशगर—की स्थिति खोतान और कूचा (कूची) की ओर जाने वाले दो मार्गों के मध्य है। अतः तारिम बेसिन के उत्तरी एवं दक्षिणी प्रदेशों की सभ्यता और संस्कृति के बीच माध्यम का कार्य काशगर ने किया। चीनी साहित्य काशगर के विभिन्न नामों का उल्लेख करता है—जैसे "शू-ले" (सोंग-युन के द्वारा दिया गया नाम) "फा-योग" (५ वीं शताब्दी के आरंभ काल में) आदि।[2]

खोतान की स्थिति "काशगर" के दक्षिण-पूरब में है। इसके प्राचीन नामों में यू-तियेन, यू-तुन उल्लेखनीय हैं; किन्तु खोतान से प्राप्त खरोष्ठी लेख, जिनकी तिथि तीसरी शताब्दी मानी गई है, "कुस्तन" नाम का उल्लेख करते हैं।[3] खोतान के पड़ोसी देशों में "नीया" का नाम उल्लेखनीय है। नीया से पूरब इन्देरे नाम का प्रदेश है। ह्वेन-सांग ने इन प्रदेशों का वर्णन करते हुए बताया है कि "नीया" से पूरब के ये सभी

१—पी० सी० बाग्ची, इन्डिया एन्ड सेन्ट्रल एशिया, पृष्ठ ४२-८९।

२—देखिए, ए. स्टाइन, एन्शियंट खोतान, पृष्ठ ४७।

३—वही, पृष्ठ १६३-१९७।

प्रदेश मरुस्थल थे। इन प्रदेशों का ऐतिहासिक महत्त्व यहां से प्राप्त खरोष्ठी, ब्राह्मी, तिब्बती और चीनी लेखों, प्राचीन-अवशेषों तथा खंडहरों से ज्ञात होता है।[१] लोब-नोर खोतान के उत्तर-पूरब और लाउ-लान के दक्षिण पूरब के सिरे पर स्थित है। चीन और मध्य एशिया के सब से प्राचीन मार्ग पर स्थित यह प्रदेश तुन-हुआंग, और खोतान, नीया आदि पश्चिमी प्रदेशों के यातायात का लघुतम मार्ग है। तारिम नदी के कारण यह प्रदेश अन्य प्रदेशों की अपेक्षा अधिक हरा भरा था।

उत्तरी प्रदेशों में कूची, अग्निदेश और तुरफान क्रमशः काशगर के उत्तर-पूरब में हैं।

कुछ विद्वानों ने चीनी तुर्किस्तान का 'भारोपीय मरुउपवन' (Indo-European Oasis) नाम रखा है, क्योंकि इन प्रदेशों की १०वीं शताब्दी तक की सभ्यता का मूल स्थान भारत और ईरान था[२]। स्टाइन ने मध्यएशिया अभियान के पश्चात् इसका सेरिन्डिया नाम देना अधिक उत्तम समझा। उन्होंने वहां भारत और चीन की सभ्यता का संगम पाया और यही कारण था कि उन्हें सेरिन्डिया नाम अधिक उपयुक्त जंचा[३]। प्राचीन पाश्चात्य साहित्य में चीन को "सेरेस" (Seres) कहा गया है।

प्राचीन सभ्यता और संस्कृति के इतिहास में मध्यएशिया

१—चीनी तुर्किस्तान के प्राचीन प्रदेशों की खुदाई में पुरातत्त्ववेत्ताओं को अमूल्य निधि प्राप्त हुई है। खोतान के इतिहास, सभ्यता और संस्कृति के विशद विवरण के लिये देखिए, ए. स्टाइन, एंशियंट खोतान, भाग १ और भाग २।

२—पी० सी० बागची, इन्डिया एन्ड सेन्ट्रल एशिया, पृष्ठ १३-१४

३—ए. स्टाइन, सेरिन्डिया, भाग १, पृष्ठ ८

एक विशिष्ट संस्कृति-संगम रहा है। भारत का मध्यएशिया के साथ सम्बन्ध प्रायः सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् हुआ जब भारतीयों ने भारत की सीमा पार कर अन्य देशों की यात्रा की[१]। इसके पश्चात् अशोक और कनिष्क की बौद्ध धर्म प्रचार की नीति ने सभ्यता, संस्कृति और धर्म का आदान-प्रदान करवाया।

चीन का इतिहास मध्य एशिया के कुछ प्रदेशों पर चीनी राजाओं की प्रभुता का उल्लेख करता है। काशगर ने ई० पू० पहली शताब्दी में चीनी राजाओं की प्रभुता स्वीकार की थी। इसके पश्चात् खोतान के शासकों ने काशगर पर विजय प्राप्त की, किन्तु पुनः चीनी सेनापति पान-चाओं के नेतृत्व में प्रायः पहली शताब्दी के अन्त में काशगर चीनी शासकों के शासन में आ गया[२]। श्री बागची के उल्लेखानुसार ६७८ ई० में तुर्क लोग बुरी तरह पराजित किए गए और चीनियों ने पुनः पूर्वी तुर्किस्तान पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया[३]।

अतः चीनी तुर्किस्तान के सामाजिक जीवन में अन्य देशों की अपेक्षा चीन और भारतीय तत्त्वों का विशेषरूप से योग मिलता है। बौद्ध साहित्य के अनुसार अशोक के समय उत्तर-पश्चिम के भारतीयों ने खोतान में नई बस्तियों की स्थापना की। कूची के प्राचीन शासकों के भारतीय नाम और वहाँ की भाषा में शुद्ध संस्कृत शब्दों का बाहुल्य चीनी तुर्किस्तान में भारतीयों की पहुँच का संकेत करते हैं[४]।

१—पी० सी० बागची, इन्डिया एन्ड चाइना, पृ० ९

२—पी० सी० बागची, इन्डिया एन्ड सेन्ट्रल एशिया, पृष्ठ ४४

३—वही

४—पी० सी० बागची, इन्डिया एण्ड सेन्ट्रल एशिया, पृ० ६७;
राहुल सांकृत्यायन, बौद्ध संस्कृति, पृ० २९१;

चीनी तुर्किस्तान के प्रदेश भारतीय और चीनी बौद्ध प्रचारकों के केन्द्र थे। ह्वेन-सांग के विवरण के अनुसार खोतान, कूची आदि प्रदेश भिक्षुओं की शिक्षा और धर्म के मुख्य स्थान थे। इस सम्बन्ध में कूचा के "कुमारजीव" का (३३२-४१३ ई०) नाम उल्लेखनीय है जिनका नाम भारतीय ग्रन्थों के चीनी अनुवादकों में अद्वितीय है। चीन में बौद्धधर्म के प्रचार में मध्यएशिया के भिक्षुओं का उतना ही श्रेय है, जितना भारतीय बौद्ध भिक्षुओं का। इसका मुख्य कारण यह है कि धर्म प्रचारकों ने मध्यएशियाई मार्ग का अनुसरण किया था। भारतीय और चीनी धर्म-दूतों के लिए मध्यएशियाई मार्ग प्रायः एक हजार वर्ष तक बहुत ही उपयोगी रहा। यह मार्ग हान् साम्राज्य के समय खुला था जो उत्तर पश्चिम भारत से काबुल की घाटियां होते हुए हिड्डा और नगरहार को पार कर बमियान पहुँचता था[१]। यह स्थान मध्यएशिया और चीन जाने वाले भारतीय बौद्ध भिक्षुओं का विश्राम स्थान था। बमियान से यह पथ बैक्ट्रिया जाता था। बैक्ट्रिया से दो रास्ते मध्यएशिया और चीन को जाते थे। पहला उत्तर-पश्चिम की ओर होता हुआ तुरफान तक था और दूसरा पामीर पार कर काशगर पहुँचता था। काशगर से पुनः दो पथ जाते थे—तारिम बेसिन, यारकन्द, खोतान, नीया आदि चीनी तुर्किस्तान के मुख्य प्रदेशों से होते हुए और उत्तर की ओर कूची, अग्निदेश और तुरफान को पार करते हुए। काशगर से निकले ये दोनों दक्षिणी और उत्तरी मार्ग चीन की सीमा (Jade Gate) पर मिलते थे[२]।

१—पी० सी० बागची, इन्डिया एण्ड चाइना, पृष्ठ ८

२—एम० स्टाइन, सेरिन्डिया, भाग १, पृष्ठ ६

मार्ग में आए इन प्रदेशों ने विशेष रूप से धर्म और सभ्यता के आदान-प्रदान में कार्य किया। ह्वेन-त्सांग के विवरण के अनुसार चीनी तुर्किस्तान के निवासियों ने जितनी शीघ्रता से सभ्यता और धर्म को अपनाया तथा अन्य देशों के सांस्कृतिक व धार्मिक विकास में योग दिया, वह वास्तव में इन प्रदेशों के लिए सराहनीय है। संसार के इतिहास में मध्यएशिया का प्रमुख स्थान बताते हुए मैकूगवर्न ने यहाँ तक कहा है कि यूरोप और अमेरिका ने मध्यएशिया की संस्कृति, राजनीति और आर्थिक जीवन से पूर्णतः लाभ उठाया[1]।

चीनी तुर्किस्तान के प्राचीन लेखों, अवशेषों और इमारतों की खोज के लिए आरेल स्टाइन की खोज नवीन, सराहनीय एवं महत्त्वपूर्ण है, किन्तु इसके पहले भी चीनी तुर्किस्तान के प्रदेश में पुरातत्त्व की खुदाई का कार्य हुआ था।

खोज का संक्षिप्त इतिहास

सन् १८९० ई० में श्री कर्नल बावेर नामक एक ब्रिटिश अधिकारी ने सर्वप्रथम एक हस्तलिखित भूर्ज-पत्र (Birch bark manuscript) बंगाल के एशियाटिक सोसायटी के सम्मुख रखा था। कर्नल बोवर जब ब्रिटिश अधिकारी के पद पर कूचा में थे, तभी उन्होंने एक स्थानीय तुर्की से यह भूर्ज-पत्र खरीदा था। उस तुर्की को कूचा के निकट क्यूमतूर नामक नगर की खुदाई में यह लेख प्राप्त हुआ था। डा० हॉर्नले ने लेख का अध्ययन कर बताया कि प्रस्तुत लेख चौथी शताब्दी की उत्तर भारत की लिपिमें लिखा गया है[2]।

१—मैकूगवर्न, अर्ली एम्पायर आफ सेण्ट्रल एशिया, पृ० १

२—पी० सी० बागची, इण्डिया एण्ड सेण्ट्रल एशिया, पृ० ९०

कुछ ही वर्ष पश्चात् प्रायः १८९२ ई० में फ्रेंच विद्वानों का एक दल डी. डी. रिहन्स (Dutreuil de Rhins) की अध्यक्षता में मध्यएशिया गया। डी. डी. रिहन्स को खोतान से दो हस्तलिखित पत्र प्राप्त हुए। लेख-प्राप्ति के स्थान का समीकरण ह्वेन-त्सांग द्वारा उल्लिखित गोश्रृङ्ग-विहार से किया गया[1] है।

लेख के अध्ययन के पश्चात् मालूम हुआ कि भाषा प्राकृत से मिलती जुलती है जो दूसरी शताब्दी की खरोष्ठी लिपि में लिखी गई है। इस लिपि की समता कुशाण काल के उत्तर पश्चिम भारत की लिपि से की जाती है।[2]

इन अभिलेखों ने संसार के बड़े-बड़े विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया, और चीनी तुर्किस्तान शीघ्र ही पुरातत्त्व की खुदाई का केन्द्र बन गया। सन् १८७८ ई० में डा० कलेमेन्ट्ज के नेतृत्व में रूसी पुरातत्त्व सम्बन्धी एक अभियान चीनी तुर्किस्तान के उत्तरी प्रदेशों की खुदाई के लिए गया। उन्हें, ईदिकुत्सहरि, कूचो, क्यूरखोजो, तुरफान, तोयूक् और मुरतुक से प्राचीन सभ्यता के अवशेष प्राप्त हुए।[3]

सन् १९००–१९०१ ई० में ब्रिटिश सरकार के संकेत पर भारत-सरकार ने आरेल स्टाइन की अध्यक्षता में पुरातत्त्व-वेत्ताओं का एक समूह खुदाई के कार्य के लिए भेजा। भारत सरकार ने ११ हजार रुपये की स्वीकृति इस खुदाई के कार्य के लिए स्टाइन

१—ए० स्टाइन, एन्शियंट खोतान, भाग १, पृष्ठ १८८

२—पी० सी० बागची, इण्डिया ऐण्ड सेण्ट्रल एशिया, पृष्ठ ९०

स्टाइन, एन्सियन्ट खोतान पृष्ठ ३६३, स्टाइन के अध्ययन के अनुसार इस लेख की भाषा पूर्व प्राकृत है, जिसमें कहीं संस्कृत के शब्दों का भी पुट है।

३—पी० सी० बागची, इण्डिया ऐण्ड सेण्ट्रल एशिया, पृष्ठ ९०

को दी[1]। स्टाइन के नेतृत्व में ही क्रमशः १९००-१९०१, १९०६ और १९१३ ई० में तीन अभियान भारत सरकार की ओर से गए[2]।

श्री स्टाइन की यात्रा का प्रारंभ काश्मीर से मई १९०० ई० के आरंभ में हुआ। ऐतिहासिक और भौगोलिक दृष्टि से उन्होंने कार्य के स्थानों का एक पूर्ण ब्योरा तैयार किया और काश्मीर से पामीर को होते हुए काशगर का पथ लिया। काशगर और यारकन्द के प्राचीन अवशेषों का संग्रह एवं अध्ययन करते हुए वे करघलिक के पथ से खोतान आए। इन प्रदेशों में खोतान बौद्ध धर्म का केन्द्र और ह्वेन-त्सांग के कार्य का स्थान था। खोतान से नीया, इन्देरे, कर-दोंग, अक-सिपिल, और रवाइ में कार्य करने के पश्चात् स्टाइन ने लन्दन वापिस आकर अभियान का पहला दौरा समाप्त किया। उन्होंने इन प्रदेशों में न केवल खरोष्ठी, चीनी और तिब्बती लेखों का संग्रह किया प्रत्युत मूर्तिकला का विकसित रूप भी देखा। स्टाइन ने इस प्रथम अभियान का पूर्ण विवरण अपनी पुस्तक एंशियंट खोतान में किया है।[3]

दूसरा अभियान १९०६ ई० में गया। इस बार चीनी तुर्किस्तान के दक्षिणी-प्रदेश कार्य के क्षेत्र बने। खोतान, नीया, इन्देरे, लोउ-लान आदि पूर्वी तुर्किस्तान के चारो ओर स्थित प्राचीन प्रदेशों में पूरी सफलता के साथ कार्य हुआ। मीरान के प्राचीन किलों में हजारों तिब्बती लेख प्राप्त हुए। सन् १९०८

१—राहुल सांकृत्यायन, बौद्ध संस्कृति, पृष्ठ २९९

२—तीनों अभियान के विवरण, ऐन्शियन्ट खोतान और सेरिन्डिया पुस्तकों में है।

३—ए० स्टाइन, एंशियंट खोतान, भाग १।

ई० में स्टाइन ने मजार-ताघ नामक स्थान में खोतान, चीन और तिब्बत के कई प्राचीन लेखों की प्राप्ति की, किन्तु अस्वस्थता के कारण उन्हें कुन-लुन की घाटियों से वापिस आ जाना पड़ा। इस दौरे में हजारों बुद्धों की गुफाएं मिलीं, जिसे 'सहस्रबुद्धगुहा' (Caves of the thousand Buddhas) कहते हैं।[1] इस प्रकार रेशमी कपड़ों के ऊपर बौद्ध चित्र-कला का एक नवीन स्वरूप देखा गया। इस अन्वेषण में विभिन्न भाषाओं में लिखे ग्रन्थों और लेखों का संग्रह हुआ। इस द्वितीय अभियान के विवरण का प्रकाशन श्री स्टाइन ने सेरिन्डिया नामक पुस्तक में किया है।

तीसरा अभियान १९१३ ई० में कान-चाऊ प्रदेश तक गया। इस बार खोतान, नीया, तुन-हुआंग आदि प्रदेशों में कार्य हुआ। काशगर के पथ के प्राचीन प्रदेशों से स्टाइन ने ऐतिहासिक सामग्रियां एक कीं। ईरानी मिट्टी की बनी बड़ी से बड़ी मूर्तियाँ प्राप्त हुईं। इन मूर्तियों की बनावट भारत और मध्यएशिया की बौद्ध-कला की एकता बताती है। १९१५ ई० में स्टाइन काशगर का कार्य समाप्त कर वंक्षु (आक्सस) के पथ से वापिस आए। इस अन्वेषण का ब्योरा 'इनरमोस्ट एशिया' में है।

साधन सामग्री

चीनी तुर्किस्तान के सामाजिक जीवन का स्वतंत्र रूप से कोई विवरण प्राचीन साहित्यिक ग्रंथों में नहीं मिलता। चीन का इतिहास चीनी तुर्किस्तान तथा उसके पड़ोसी देशों के ऐतिहासिक और राजनैतिक सम्बन्ध का ही उल्लेख करता है। बौद्ध यात्रियों ने समाज की अपेक्षा अपनी यात्रा और वहाँ के धर्म का विवरण दिया है, जो उनकी यात्रा का मुख्य ध्येय था। अतः इन साधनों के

१—ए० स्टाइन, सेरिण्डिया, संख्या २, पृष्ठ ६९१।

आधार पर चीनी तुर्किस्तान की सामाजिक स्थिति का अनुमान ही किया जा सकता है न कि उनका स्पष्ट चित्रण।

स्टाइन की खोज ही एक ठोस प्रमाण है, जो चीनी तुर्किस्तान की सामाजिक, सांस्कृतिक, और धार्मिक स्थिति पर प्रकाश डालती है। स्टाइन की पुस्तकें, जिनमें उन्होंने अपने प्रथम, द्वितीय और तृतीय अभियानों का विवरण दिया है,[1] विशेष रूप से ऐतिहासिक दृष्टि से लिखी गयी मालूम होती हैं, जिनमें वहाँ की संस्कृति का स्वतंत्र विवरण नहीं दिया गया है। स्टाइन द्वारा प्राप्त नीया, इन्देरे और लाउलान से प्राप्त ७८२ खरोष्ठी अभिलेखों का संग्रह ही इस विषय में उल्लेखनीय हैं।

इनमें ७६४ खरोष्ठी लेखों का प्रकाशन श्री ए० एम० बोयर, श्री इ० जे० रैप्सन और श्री ई० सेनार्ट ने खरोष्ठी इन्सक्रिपशनस् नामक पुस्तक के तीन भागों में क्रमशः १९२०, १९२७ और १९२९ ई० में किया है[2]। बाकी १८ लेख टी० बरो द्वारा बी. एस. ओ. एस. के नवें अध्याय में प्रकाशित और अनूदित हुए हैं[3]।

इन लेखों में अधिकांश लेख राजकर्मचारियों के निमित्त लिखे गए हैं, कुछ अभियोग-निवेदन हैं और कुछ निजी सगे सम्बन्धियों को साधारण समाचार अथवा घरेलू कारोबार आदि के लिए लिखे गए हैं[4]। इन लेखों से चीनी तुर्किस्तान के

१—ए० स्टाइन, 'एन्शियंटखोतान', १९०७, भाग १ और २;
ए० स्टाइन, 'सेरिन्डिया', १९२१ भाग १, २, और ३;
ए० स्टाइन, 'द इनरमोस्ट एशिया', १९२८.

२—खरोष्ठी इन्सिक्रपशन, पहला, दूसरा और तीसरा भाग

३—बी. एस. ओ. एस, भाग ९, पृष्ठ १११

४—एफ. डब्लू. थामस, ऐक्टा, ओ०.१२, पृष्ठ ६२

राजनीतिक और आर्थिक जीवन का जो चित्रण मिलता है उसकी आड़ में वहाँ के सामाजिक जीवन की एक रूप-रेखा मालूम होती है। अतएव हमने इन ७८२ खरोष्ठी लेखों का मूल आधार लेकर चीनी तुर्किस्तान के सामाजिक जीवन का चित्रण किया है।

चीनी तुर्किस्तान के नीया, इन्देरे, और लोउलान से श्री स्टाइन को ७८२ खरोष्ठी लेखों का जो एक बृहत् संग्रह उपलब्ध हुआ है,

खरोष्ठी अभिलेखों का स्वरूप

जिनमें से कुछ लेख धरती की सतह पर, कुछ खंडहरों के बीच और कुछ खुदाई से प्राप्त हुए[१]। वस्तु-आधार की दृष्टि से इन खरोष्ठी अभिलेखों को पांच भागों में विभाजित किया जा सकता है।

१—काष्ठपट्टिकाओं पर लिखे खरोष्ठी लेख
२—चर्म पत्र पर लिखे खरोष्ठी लेख
३—कागज पर लिखे लेख
४—रेशमी कपड़ों पर लिखे लेख
५—दीवाल, मूर्त्ति, स्तूप आदि पर खुदे लेख[२]

नीया के प्राचीन खंडहरों से सैकड़ों की संख्या में खरोष्ठी लेख प्राप्त हुए हैं। इनमें अधिकांश काष्ठपट्टिकाओं पर लिखे हैं जो विभिन्न आकारों की हैं। आयताश्र, समचतुरश्र और पंचाश्र पट्टिकाओं की संख्या अधिक है। उनकी लम्बाई ७½"-१५" और चौड़ाई १½"-२½" है[३]। एक आयताश्र पट्टी के किनारे छोटा सा छेद है, जिसमें टहनी

१—ए. स्टाइन, एंशियन्ट खोतान, पृष्ठ ३६८
ए. स्टाइन, जे. आर. ए. एस, १९०१, पृष्ठ ५६९
२—ए० स्टाइन, एन्शियन्ट खोतान, पृष्ठ ३६८,
३—राहुल सांकृत्यायन, बौद्ध संस्कृति, पृष्ठ २४१

लगी है। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि संभवतः इन पट्टिकाओं को टहनी द्वारा दीवाल में टांगा जाता था। इन्हें पत्र की तरह भेजते समय लिफाफे की तरह दूसरी पट्टियों से ढक कर मुहर लगा दी जाती थी। लिफाफे के स्थान पर काम करने वाली पट्टियों पर पता लिखा रहता था। एक ओर पाने वाले का नाम और दूसरी ओर पत्र-दूत का नाम रहता था[१]।

चर्म पत्र में लिखे खरोष्ठी लेख नीया प्रदेश से प्राप्त हुए हैं। इनमें कुछ पूर्ण और सुरक्षित अवस्था में हैं और कुछ अधूरे और अस्पष्ट। अभिलेखों के लिए भेड़ का चमड़ा व्यवहार में लाया जाता था। इनमें एक ओर लेख की पंक्तियां हैं और दूसरी ओर जिनके लेख या पत्र भेजे जाते थे उनके नाम व पता लिखे जाने का अनुमान होता है। इस प्रकार का एक चर्म पत्र मिला है, जिसमें एक ओर लेख की पंक्तियां हैं और दूसरी ओर एक छोटी पंक्ति लिखी है। वाक्य के शब्द यद्यपि अस्पष्ट हैं, किन्तु अन्तिम शब्द 'ददवो' पठनीय है। इससे यह अनुमान किया जाता है कि इस ओर नाम व पता लिखे जाते थे। चमड़े के व्यवहार में सैद्धान्तिक रूप से भले ही धार्मिक लोगों ने रोक लगाई हो किन्तु काश्मीर के रुढ़िवादियों की भांति खोतान के लोगों में इस प्रकार की कोई रुकावट नहीं थी[२]। प्राचीन चर्मलेखों को देखने से ऐसा ही मालूम होता है कि

१—ए० स्टाइन, जे० आर० ए० एस० १९०१, पृष्ठ ९७०
राहुल सांकृत्यायन, बौद्ध संस्कृति, पृष्ठ २४१

२—ए० स्टाइन, एन्शियंट खोतान, पृष्ठ ३४९। प्रायः दो दर्जन खरोष्ठी लेखों से यह मालूम होता है कि वहाँ के बौद्ध धर्म मानने वालों को लिखने के कार्य के लिए चमड़ा व्यवहार करने में कोई बाधा नहीं थी।

बड़ी ही तत्परता और सावधानी से लोग इस काम के लिए चमड़ा तैयार करते थे [१]।

लोउलान से तीन कागज के पन्नों पर खरोष्ठी लिपि में लिखे लेख मिले हैं। लेख के अक्षर धुँधले पड़ चुके हैं, किन्तु लिखावट में एक समता नहीं मालूम होती। काष्ठ और कागज पर लिखे लेख कुछ सुरक्षित रूप में और कुछ भग्नावस्था में मिले हैं[२]।

लोउलान से प्राप्त रेशमी कपड़े पर के खरोष्ठी लेख कागज की ही भाँति प्राचीन काल में काम में लाए जाते थे। संभवतः कागज के आविष्कार के पहले, अर्थात् प्रायः १५० ई० सं० के पूर्व, लेखन सामग्री के रूप में रेशमी कपड़ों का प्रयोग करने की प्राचीन रीति थी[३]।

खंडहरों की दीवालों तथा मूर्तियों पर कई छोटे-छोटे खरोष्ठी लिपि में लिखे लेख मिले हैं। अभिलेखों में अधिकांश सरकारी लिखा-पढ़ी के हैं। किसी-किसी में सरकारी अधिकारियों को शासन प्रबन्ध और पुलिस-सम्बन्धी आज्ञा दी गई है, किसी में अभियोग निवेदन किया गया है और कुछ समन, रसद, बार बरदारी तथा सरकारी काम से जाने वाले व्यक्तियों के विषय में हैं। सरकारी अभिलेखों के लिए लेखों में "कीलमूद्र" का उल्लेख है।[४] लेख का 'महनुअव महरय' स्थानीय उच्चाधिकारी अथवा

१—ए० स्टाइन, वही, पृष्ठ ३४७, राहुल, सांकृत्यायन, बौद्ध संस्कृति. पृष्ठ २४१

२—ए. स्टाइन, सेरिन्डिया, पृ० ३७२

३—वही, वही, पृ० ३८३

४—खरोष्ठी इन्सिक्रपशनस् में उल्लिखित "कीलभद्र" का अंग्रेजी अनुवाद श्री० टी० बरो ने "Wedge tablet" किया है।

सामंत राजाओं के लिए उल्लिखित मालूम होता है[१]। दो पट्टिकायें किसी साहित्य ग्रन्थ से संबंध रखती मालूम होती हैं, जिनमें एक ओर चार संस्कृत श्लोक हैं और दूसरी ओर प्राप्ति का उल्लेख है[२]।

भाई अथवा सगेसम्बन्धियों को लिखे कुछ निजी पत्र भी हैं, जिनका विषय साधारणतः सामान्य जीवन है। इन खरोष्ठी लेखों से चीनी तुर्किस्तान के लोगों के राजनीतिक और आर्थिक जीवन पर विशेष प्रकाश मिलता है।

चीनी तुर्किस्तान के खरोष्ठी लेख का प्रथम परिचय डी. डी. रिन्स द्वारा प्राप्त खरोष्ठी लेखों से हुआ। इस लेख की भाषा प्राकृत है और लिपि खरोष्ठी[३]। जातक आदि की भाँति श्लोक में लिखा यह लेख धम्मपद से मिलता जुलता पहला बौद्ध साहित्य है। कुछ विद्वान् इस लेख की तिथि पहली शताब्दी बताते हुए इसे भारत की ही मूलनिधि कहते हैं, जो बौद्ध भिक्षुओं द्वारा चीनी तुर्किस्तान में लाई गई थी। किन्तु श्री एस० कोनो ने लेख की लिपि की तुलना उत्तर-पश्चिम भारत की लिपिसे करते हुए बताया है कि यह लेख खोतान में ही लिखा गया है[४]। अशोक से कुषाण-काल तक के उत्तर पश्चिम भारत में खरोष्ठी लिपि का प्रचलन था और चीनी तुर्किस्तान में भी ई० सं० तीसरी शताब्दी में खोतान से लोडलान तक के प्रदेशों में खरोष्ठी लिपि

भाषा

१—ए० स्टाइन "ऑक्र्योलाजिकल डिसकवरी इन दी नेबरहुड आफ द नीया रिवर," जे० आर० ए० एस०, १९०१, पृ० ६६९-६७२;

२—जे० आर० ए० एस० १९०१, पृ० ६६९—६७२ राहुल सांकृत्यायन, बौद्ध संस्कृति पृ० २४३

३—ए० स्टाइन एंशियंट खोतान, पृ० ३६३, और बागची, इन्डिया ऐन्ड सेन्ट्रलएशिया, पृ० ९०

४—ए० स्टाईन, जे. आर. ए. एस, १९०१, पृ० ६६९।

का व्यवहार था[१]। श्री बागची का कहना है कि खरोष्ठी लिपि उत्तर-पश्चिम भारत की लिपि थी, जिसे संभवतः भारतीय यात्रियों ने उत्तर तुर्किस्तान के दक्षिणी प्रदेशों को दिया[२]।

प्राकृत भाषा का अध्ययन यह प्रमाणित करता है कि चौथी शताब्दी के आरंभ तक यह चीनी तुर्किस्तान की राजकीय भाषा थी। बरो के अनुसार तीसरी शताब्दी के शान-शान प्रदेश की राजकीय भाषा, भारत की प्राचीन प्राकृतिक भाषा थी, जो चीनी तुर्किस्तान के खरोष्ठी लेखों में लिखी गई है।[३] भारत के उत्तर पश्चिम प्रदेशों की, कुषाण-काल की भाषा प्राकृत थी। ह्वेन-त्सांग और तिब्बती साहित्य के अनुसार खोतान के अधिकांश निवासियों का मूल निवास स्थान तक्षशिला था। संभवतः भारत की भाषा और लिपि का रूप इन लोगों ने ही चीनी तुर्किस्तान को दिया।

स्टाइन ने लिखा है कि खरोष्ठी लेखों की लेखनशैली कुषाण-कालीन राजाओं के सिक्कों से मिलती है, जो पंजाब और उसके पास के देशों पर राज्य कर रहे थे। लेख की भाषा प्राकृत भाषा का प्राथमिक रूप है, जिसकी समता खोतान से प्राप्त भारतीय और चीनी सिक्कों से की जाती है।[४]

नीया और लोउलान के खरोष्ठी लेखों की भाषा और शैली में साम्य है। लोउलान के खरोष्ठी लेखों में भी नीया की भांति

१—पी० सी० बागची, इन्डिया ऐन्ड सेन्ट्रल एशिया पृष्ट ९२,

२—वही, पृ० ९२ और ए० स्टाइन, जे० आर० ए० एस० १९०१, पृष्ठ ५६९,

३—बरो, लेंग्वेज,

४—ए० स्टाइन, "ऑक्यॉलाजिकलडिसकवरी इन दी नेवरहुड आफ द नीया रिवर", जे. आर. ए. एस. १९०१ पृष्ठ-५७१,

प्राकृत भाषा ही व्यवसाय और शासन सम्बन्धी कार्यों में प्रयुक्त की जाती थी। वहां की प्राकृत में संस्कृत का पुट मिलता है। नीया और लोउलान दोनों प्रदेशों के खरोष्ठी लेखों में उल्लिखित व्यक्तिगत नामों में साम्य है जो वास्तव में भारतीय नामों की ही नकल मालूम होते हैं, जैसे—आनन्दसेन, बुधमित्र, घम्मपाल, पुन्यदेव, वासुदेव, आदि।[1]

राजा की ओर से जो आज्ञा पत्र लिखे जाते थे उनमें राजा के लिए "महनुअव महरय" आदर सूचक सम्बोधन प्रायः प्रत्येक आज्ञापत्र के आरंभ में मिलता है।[2] "महनुअव महरय" का अर्थ संस्कृत के 'महानुभाव महाराज' से है। लेखों में संस्कृत शब्दों का पुट है जैसे संदेश-वाहकों के लिए "लेखहारक" दूतों के लिए "दूतिय" शब्द है।[3]

लेखों में इरानियन भाषा का मिश्रण है। बरो ने लिखा है कि खरोष्ठी लेखों में इरानियन शब्दों का बाहुल्य है,[4] जैसे—काखाद- गुशुर, दिविर, नचिर, नवस्तग आदि।[5]

मध्यएशिया का इतिहास और उसका अन्य देशों से सम्बन्ध ही आधुनिक लेखकों का प्रायः मुख्य विषय रहा, जिसका उल्लेख

१—ए० स्टाइन, सेरिन्डिया, भाग १, पृष्ठ ४१३।

२—जैसे लेख नं० १ "महनुअव महरय लिखति" खरोष्टी इंन्सक्रिपशन्स, भाग १।

३—ए० स्टाइन, एंशियंट खोतान,

४—बरो, लेंग्वेज, इन्ट्रोडक्शन,

५—देखिए, बरो, लेंग्वेज, इन्ट्रोडक्शन, ७
विशेषणों की व्याख्या आगे के अध्यायों में है।

विभिन्न पुस्तकों में है। टी० बरो ने स्टाइन द्वारा प्राप्त खरोष्ठी लेखों का अंग्रेजी अनुवाद किया और लेखों को भाषा का अध्ययन कर उसकी विवेचना की। लेखों की भाषा मिश्रित होने के कारण कई शब्दों की उत्पत्ति, और व्याकरण की दृष्टि से उनका अर्थ, अज्ञात है। बरो ने इरानियन भाषा का खरोष्ठी लेखों पर कैसा प्रभाव पड़ा है—इसे स्पष्ट किया है।[१] एफ० डब्लू० थॉमस ने भी लेखों के कुछ शब्दों की विवेचना छोटे-छोटे लेख के रूप में की है। इन शब्दों से लेख के प्रसंगों का स्पष्टीकरण होता है। इसके अतिरिक्त पी० सी० बागची के कार्य भी इस विषय पर प्रकाश डालते हैं। चीन में बौद्ध धर्म के प्रवेश का उल्लेख करते हुए बागची ने मध्यएशिया के धर्म पर प्रकाश डाला है जिसकी सहायता से चीन में बौद्ध धर्म का अधिकाधिक प्रचार हुआ था।[२]

प्रस्तुत विषय पर आधुनिक साहित्य

श्री बागची ने मध्य-एशिया के उपनिवेशों, उनके प्रदेशों और उनकी भाषा का विवरण दिया है। यह पुस्तक श्री बागची के भाषणों का संग्रह है, जिन्हें उन्होंने १९४९-५१ ई० में राष्ट्रीय शिक्षा-सभा में दिये थे। श्री राहुल सांकृत्यायन की "बौद्ध संस्कृति" नामक पुस्तक से भी काशगर, कूचा, आदि चीनी-तुर्किस्तान के प्रदेशों का विवरण बौद्ध धर्म के दृष्टि-कोण से मिलता है।

इस विषय पर श्री रतनचन्द्र अग्रवाल के कार्य भी उल्लेखनीय है। उन्होंने खरोष्ठी लेखों के आधार पर चीनी तुर्किस्तान

१—बरो, लेंग्वेज, इस पुस्तक में लेखक ने चीनी तुर्किस्तान की खरोष्ठी भाषा की व्याख्या की है।

२—पी० सी० बागची, इन्डिया ऐण्ड चाइना।

के समाज में दासों, स्त्रियों और भिक्षुओं की स्थिति का विवरण दिया है।[1]

१—रतनतचन्द्र अग्रवाल के लेख, आई-एच-क्यू, जे० एन० एस० आई, जे० वी० आर० एस० तथा सरूप भारती विश्वेश्वरानन्द इन्स्टीट्यूट, होशियारपुर, १९५४ में प्रकाशित पत्रिकाओं में है।

अध्याय—द्वितीय
समाज की रचना

जाति-व्यवस्था

चीनी तुर्किस्तान का समाज समकालीन अन्य देशों की सभ्यता और संस्कृति से अछूता नहीं रहा। अन्य संस्कृतियों के प्रकाश से प्रकाशित चीनी तुर्किस्तान का समाज अपने ढंग का निराला था। खरोष्ठी लेखों के अतिरिक्त अन्य उपलब्ध साधन भी वहाँ के सुव्यवस्थित और विकसित समाज का ही परिचय देते हैं।

प्राचीन भारत में जाति-व्यवस्था समाज का मूल आधार थी। आरंभ में विदेशियों के लिए हिन्दू समाज की यह जाति-व्यवस्था आश्चर्य का विषय थी। जाति-विभाग के प्रत्येक पहलू से परिचित न होने पर भी विदेशियोंने देखा कि हिन्दू समाज प्रधानतः जाति व्यवस्था और समाज के अन्तर्गत वैवाहिक सम्बन्धों पर आधारित है।[1]

चीनी-तुर्किस्तान के समाज ने भारतीय समाज के इस जाति-व्यवस्था सिद्धान्त को अपनाया अथवा नहीं, खरोष्ठी लेखों के अधार पर इसे निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। भारत के चार वर्णों—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—की भांति चीनी तुर्किस्तान के समाज में इन चारों के अस्तित्व का उल्लेख इन्ही नामों से नहीं मिलता। लेख के एक स्थल पर *श्रमण ब्राह्मण* की गणना "गृहस्थ," "राज-कर्मचारी" और *वुरचुगस* के साथ

१—श्री एस० घुर्ये, कास्ट एन्ड रेसेज इन् इन्डिया, पृ० १

की गई।[१] किन्तु इस प्रसंग में उल्लिखित (*ब्राह्मण*) को समाज के वर्ण विभाजन का ही द्योतक माना जाय, यह कहना आधारहीन मालूम होता है। खरोष्ठी लेखों में इसका पर्याप्त प्रमाण नहीं मिलता। क्योंकि वर्णों में क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की गणना है किन्तु खरोष्ठी लेखों में इन तीनों का उल्लेख नहीं है। इन वर्णों में ब्राह्मण का ही परिचय है अतः इस एक उदाहरण से वर्ण-श्रेणी का अनुमान नहीं कर सकते। हो सकता है कि खरोष्ठी लेखों के अतिरिक्त अन्य स्थलों पर चीनी तुर्किस्तान के वर्ण-विभाजन की चर्चा हो, लेकिन विषय का क्षेत्र न होने के कारण उनपर विचार करना यहां संभव नहीं है। लेखों के किसी भी स्थल से वर्ण या जाति की चर्चा नहीं मालूम होती।

सम्भव है चीनी तुर्किस्तान के निवासियों में ब्राह्मण वर्ण का मूल निवासस्थान भारत हो और इन भारतीय ब्राह्मणों का ही उल्लेख उक्त लेख में किया गया हो। "श्रमण-ब्राह्मण" के उल्लेख से पालि साहित्य भरा पड़ा है। अनुमानतः चीनी तुर्किस्तान के समाज ने भी बौद्ध साहित्य के श्रमण-ब्राह्मण को पालि ग्रन्थों में उल्लिखित श्रमण के ही अर्थ में लिया होगा। बरो ने मध्यएशिया में ब्राह्मण-वर्ण के अस्तित्व का अनुमान गलत बताया है।[२]

किन्तु जाति-व्यवस्था के अभाववश समाज की सुव्यवस्था में किसी प्रकार की कमी हो, ऐसा नहीं मालूम होता है। चीनी तुर्किस्तान के समाज की समता कुछ हद तक चीन के समाज

१—लेख नं० ९९४ गोठ भटर जंन श्रमंन ब्रमंन बुरचुग स च एदे जंन तुस्महु चवल अज..." "बुरचुग" किसी एक विशेष समुदाय का उल्लेख है। बरो, लैंग्वेज, पृ० १२२

२—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ १०९

से की जासकती है। चीन के प्राचीन समाज में जाति-विभाग का उल्लेख नहीं मिलता, किन्तु व्यवसाय की दृष्टि से वहां के प्राचीन समाज को चार भागों में विभक्त किया गया है।

१—उच्च श्रेणी के अधिकारियों का समुदाय २—कृषक ३—कलाकार और ४—व्यवसायी। चीन में व्यवसाय के अनुसार समाज में श्रेणी विभाजन था।[1]

खरोष्ठी लेखों के आधार पर चीनी तुर्किस्तान के समाज की समता कुछ हद तक चीन की इस सामाजिक व्यवस्था से कर सकते हैं। लेख नं० ५५४ स्पष्ट रूप से भिक्षु, गृहस्थ, राजकर्मचारी और *वुरचुगस* का उल्लेख करता है।[2] वुरचुगस किसी एक वर्ग समुदाय का संकेत है।[3]

व्यवसाय की दृष्टि से चीनी तुर्किस्तान का समाज भी राजकर्मचारी, कृषक, शिल्पी, व्यापारी और दास की श्रेणी में विभक्त था। राजकर्मचारियों में भी भिन्न भिन्न श्रेणियाँ थीं। उच्च पदाधिकारियों और साधारण कर्मचारियों की स्थिति में अन्तर था। राजा के पश्चात् इन अधिकारियों में चोझवो सोंजक का पद श्रेष्ठ था। *चोझवो*[4] एक स्थानीय पद था, जिसका उल्लेख प्रायः ४० लेखों में है। श्रेणी की दृष्टि से *चोझवो* का स्थान *ओगू, गुशुर, काल* और *चंकुर* के पद से श्रेष्ठ नहीं था। किन्तु *चोझवो सोंजक* प्रदेश का शासक था। जिसकी राजधानी

१—जी एस० घुर्ये कास्ट एन्ड रेश इन इन्डिया पृष्ठ १२७

२—लेख नं० ५५४ "गोठ मटर जंन श्रमंन जमंन वुरचुगस स च एदे"

३—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ १२२

४—बरो, ने ४० लेखों की संख्या बताई है, जिनमें चोझवो का उल्लेख आया है। देखिये, आगे सातवें अध्याय में।

चडोटा नीया थी।[1] अतः चोझवो सोंजक का पद निश्चय ही इन सब अधिकारियों में श्रेष्ठ था। लेख नं० २७२ में राजा "चोझवो सोंजक" को अधिकार पूर्ण स्वर में कहता है कि जब मैंने राज्य के इन कामों को करने की आज्ञा दी है तो रात-दिन एक करके भी काम पूरा होना चाहिए[2]। "चोझवो सोंजक" की आज्ञा की अवहेलना करने वाले राजा की ओर से दंड के अधिकारी होते थे।

लेख नं० १४ उन राजदूतों का उल्लेख करता है, जिनकी रक्षा के लिए एक व्यक्ति साथ रहा करता था। इस रक्षक को राज्य की ओर से पारिश्रमिक मिलता था[3]।

कुछ लेख इन कर्मचारियों में जन्मजात अधिकार की चर्चा करते हैं। लेख नं० ४३८ में भीमसेन ने कहा है कि उसके वंशज "अरिवग" नहीं थे। अतः वह "अरिवग" का कार्य नहीं कर सकता[4]। "अरिवग" रक्षक होते थे, जिनका उल्लेख प्रायः

१—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ९०

२—"चझवो सोंजकस मंत्रदेति एवं च जनंद भविदव्य यो लिखनि सच सहि अनति दिर्दिमि राजकिंचस क्रिदेन तह..."

घमस, अक्टा अ०, १२ पृष्ठ ४४ चोझवो।सोंजक राजा महिरि के शासन काल में था।

देखिए, आगे सातवें अध्याय में—

३—लेख नं० १४ स च मंत्रदेति स च अहोनो इश वमेक विंनवेति यष एव सोतंनमि दतियाय गद चत्मदनदे वलग दितति...

४—लेख नं० ४३८ "देति स च अहुनो इश भिमसेन विं यवेति एव पितर पित उवदये न अरिवग..."

दूतों के साथ आया है[1]। लेख नं० १० के अनुसार लिये ने राजा को सूचना दी कि जन्म से अर्थात वंश से "*क्रुसंचि*"[2] है न कि *अरिवग*। फलतः राजा ने "*कीलमूद्र*"[3] को लिख कर भेजा कि यदि लिये जन्मजात "*अरिवग*" है, तो उसे "अरिवग" के पद से, राज्य विधान के अनुसार शीघ्र ही मुक्त कर दिया जाय[4]।

कृषक समुदाय में कुछ निपुण कृषकों का उल्लेख है, जिन्हें जुताई और बुआई का अच्छा ज्ञान था[5]। संभवतः इन कृषकों का यह जन्मजात व्यवसाय था।

शिल्पकारों में "सुवर्णकर" का उल्लेख है[6]। शराब, वस्त्र, लोई आदि वस्तुओं का वर्णन है, जिनका व्यापार व्यापारियों द्वारा होता था। समाज में इस प्रकार के जन्मजात या आनुवंशिक व्यवसाय का उल्लेख चीन के समाज से भी ज्ञात होता है। एक चीनी पुस्तक के उल्लेखानुसार राज्य-अधिकारी के पुत्र राज्याधिकारी, कलाकारी के पुत्र कलाकार, व्यापारी के पुत्र व्यापारी और कृषकों के पुत्र को सदा कृषक ही होना चाहिए[7]।

१—लेख नं० १०

२—"क्लेसंचि"—सैनिकों के अश्व और ऊंट की देख-रेख करने वाले "क्रुसंचि" होते थे बरो लैंग्वेज पृष्ठ ८६

३—खरोष्ठी लेखों में को "कीलमूद्र" लिखा गया है।

४—लेख नं० १० पितरपित उपदये न इंचि अरिवग यहि एद किलमूद्र यत्र एशति"

५—लेख नं० ३२०

६—लेख नं० ५७८

७—स्पेसर ३ पृष्ठ ४२२ जिसका उल्लेख जी० एस० घुरे ने अपनी पुस्तक "कास्ट एन्ड रेस इन इन्डिया" पृष्ठ १२८ में किया।

अतः चीनी तुर्किस्तान के इस व्यावसायिक भेद को समाज के श्रेणी-विभाजन के रूप में लिया जासकता है। समाज के मध्यम श्रेणी में कृषक, व्यापारी शिल्पकार का समावेश हो सकता है और तीसरी अथवा निम्न श्रेणी में पारिश्रमिक अथवा दासों की गणना की जासकती है।

भृत्य अथवा अनुचर और दास दो भिन्न वर्ग (समुदाय) थे। भृत्य के लिए लेखों में "*वटयग*" शब्द का उल्लेख है[१]।

ख़रोष्ठी लेख के "वटयग" और "वथयग" शब्द की उत्पत्ति बी० टी०, वरो के अनुसार "उपास्यक" शब्द से हुई। पुनः यही शब्द सोतानी भाषा में वथाय हुआ[२]।

डा० एच० डब्लू वेलो ने खोतानी भाषा के "*वधाय*" शब्द की समता "वत्तायत्र" वत्तायै, वत्ताया और वधायर्ह शब्द से की[३]। श्री टी० वरो के शब्द अनुवाद के अनुसार लेख के "वटयग" और वथयग" शब्द का हिन्दी धर्म भृत्य या अनुचर है[४]। दास और अनुचर दोनों ही स्वामी के सेवक थे, किन्तु इनकी अपनी-अपनी स्थिति थी। अनुचर संभवतः वेतन के रूप में परिश्रम करते थे। इन्हें भोजन, पचेवर, वस्त्र, चोड्ग और वेतन प्राप्त करने का अधिकार था[५]। किन्तु दासों

१—लेख नं० ४१९......"सेनस वटयग चिगित सचि श्रमंन"..

२—वरो, लैंग्वेज पृष्ठ ११८

३—एच० डब्लू० वेली, बी० एस० ओ० एस, ११ पृष्ठ ७९१ और ९४२

४—वरो, लैंग्वेज पृष्ठ ११८

५—लेख नं० १९ यितसेनस खुलोन वंती थिदग स्यति यथ पूर्व राजश्रमेन चोड्ग पचेवर परिद्रय ददवो"

के साथ इस प्रकार वेतन देने का प्रश्न नहीं उठता था, यद्यपि भोजन और वस्त्र उन्हें मिलते ही थे[1]।

दास और दासी के लिए "दम्भ" "घम्भ" "दम्भि" और "दसि" शब्द का व्यवहार खरोष्ठी लेखों में है[2]। जिस प्रकार भारत के प्राचीन आर्यों ने पराजित जाति को दास अथवा दस्यु बनाया, उसी प्रकार मध्य एशिया के हूणों ने युद्ध के कैदियों को दास बनाया[3]। दास रखने की प्रथा प्राचीन समाज के लिए गौरव का विषय था। खरोष्ठी लेखों से दास की दयनीय सामाजिक स्थिति का परिचय मिलता है। लेख नं० १४४ के अनुसार राजा को यह सूचना दी गई कि "सगन" नामक व्यक्ति ने "कचन" नाम के दास को इस प्रकार पीटा कि आठवें दिन उसकी मृत्यु हो गई। इस सूचना की सचाई के प्रमाण के हेतु राजा ने चोझवो सोंजक को इस लेख में आज्ञा दी[4]। ऐसा मालूम होता है कि चीनी तुर्किस्तान के समाज में दासों को पीटने और उनको भगा ले जाने की आम प्रथा थी। उदाहरण स्वरूप "संघरथ" के पास "वघस्र" नाम का दास था, जिसे "सुपिस" नामक किसी अन्य व्यक्ति ने संघरथ के पास से उसे

१—लेख नं० ५०६

२—लेख नं० ३५९ श्रमंन आनन्दसेन दास बुधघोष...
लेख नं० ५६९ षमंनेर उनिदग न दझ कडबो...
लेख नं० २२५ संगपरन घझ महि गोठमि...
लेख नं० ३९ यय एदेव घझि चिमिकए...

३—मकर्गन, अर्ली एम्पायर आफ सेन्ट्रल एशिया, पृष्ठ १०५

४—लेख नं० १४५ "एवस दझ तर्गिन, तेन तडितगेन से मनुश कचन अठम दिवस मृद"

भगा लिया। किन्तु "बुवश्र" "सुपिस" के पास से भाग कर संघरथ के पास ही आ गया।

राज्य विधान की ओर से दास "बुधशृ" पुनः "संघरथ" का दास प्रमाणित किया गया[1]।

दासों को उपहार के रूप में देने, उनके अदल-बदल और यहां तक कि दासों की विक्री करने में भी समाज को कोई आपत्ति नहीं थी[2]। समाज में स्त्रियों और दास दोनों ही सम्पत्ति के रूप में माने जाते थे, जिनका सहज ही में क्रय-विक्रय और दान-प्रतिदान हो सकता था।

लेख दास के द्वारा कई वस्तु और पशु चुराये जाने का वर्णन करते हैं। लेख नं० ३४५ के अनुसार "आनन्दरोन" नामक भिक्षु के दास "बुद्धघोष" ने एक व्यक्ति के घर से सिल्क का थान पट, पहनने के कपड़े नमति कम्बल, रसेन और पशुओं की चोरी की[3] थी। दासों के द्वारा चुराई जाने वाली वस्तुओं में वस्त्र, कपड़े और पशुओं के नाम आते हैं[4]। चोरी गई मालों की पूर्ति दास द्वारा किए जाने का उल्लेख है। सम्भवतः चोरी पकड़ी जाने पर दास से उतना ही माल वसूल

१—लेख नं० ४९१ "इश संगरथ गरहति यथ एदस दस बुधशृ नंम सुपिये परसितंति" अदेही पल्यति अगद तसेमि संगरथ....

२—लेख नं० ३२४ एक व्यक्ति ने उपहार में दास लिया और उसके बदले प्रतिकर मुद्रा दिया, इसके पश्चात् भी उस दास को तीसरे व्यक्ति के हाथ वेच दिया गया।

३—लेख नं० ३४६ श्रमंन-आनन्दसेन दस बुधगोष नम से महि चुगोपस गोठदे चोरित पट १२ अंश उर्म-वर्तडे।

४—लेख नं० ६६१ अंश उर्म वर्तडे

करवाया जाता था। लेख नं० ३१८ में कई वस्तुओं के नाम हैं, जिनकी चोरी दास ने की थी किन्तु पुनः उन सारी सम्पत्तियों की पूर्ति उस दास को करनी हुई। चोरी की फरियाद कभी-कभी न्यायालय में हुआ करती थी। लेख नं० ५६१।

रोम के प्राचीन विधान के अनुसार स्वामी को दास के जीवन-पर्यन्त तक का सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त था। प्लेटो ने दास के प्रति ग्रीक लोगों के दो प्रकार के व्यवहार का उल्लेख किया है। पहले के अनुसार दासों के प्रति दया और सहानुभूति का उल्लेख है और दूसरा इसके प्रतिकूल कठोर-व्यवहार का उल्लेख करते हैं। चीनी तुर्किस्तान के दासों को अपने स्वामी के दुर्व्यवहार का कबतक और किस सीमा तक सहन करना था, इसके लिए कोई नियम राज्य के न्याय-विभाग की ओर से नहीं था। दासों के प्रति राज्य विधान की उपेक्षा का मर्मस्पर्शी उदाहरण लेख नं० १४४ से मिलता है। अधिक मार पड़ने के कारण आठवें दिन एक दास की मृत्यु हो गई, किन्तु न्यायाधीश ने केवल मृतक दास के स्थान पर एक अन्य व्यक्ति को देने का आदेश दिया, और दास की इस हत्या पर कोई ध्यान नहीं दिया। मृतक दास के सम्बन्धियों को भी न्यायालय में जाकर इस अभियोग के स्पष्टीकरण का अधिकार नहीं था[1]।

राज-विधान की दृष्टि से

लेखों से ज्ञात होता है कि दासों को अपने बच्चों को गोद देने की आज्ञा नहीं थी। स्वयं अपनी इच्छा से न तो किसी बच्चे को गोद लेने का उन्हें अधिकार था और न देने का। उन्हें अपने स्वामी की आज्ञा से ही कुछ करना था। लेख के

१—लेख नं० १४४ "दस्र कचन नाम होअति सोमनेन तडिद तेन तडितगेन से मनुश कचन अठमदिवस मृद"

अनुसार एक दास ने अपने स्वामी की आज्ञा के बिना अपनी पुत्री को किसी अन्य दास को गोद दिया, जो कानून की दृष्टि से अनुचित था[1]।

लेख नं० ३१ दास के "गोठकर्य"[2] का उल्लेख करता है। प्रसंग के अनुसार घर गृहस्थी सम्बन्धी कार्यों में दास को जो कुछ भी आज्ञा दी जाय उसे अक्षरशः पालन करना है। अपने स्वामी की आज्ञा की अवहेलना करने का साहस दासों या सेवकों के लिए कठिन था[3]। दास अपने स्वामी की सेवा कभी लगातार १० और १२ वर्ष तक करते रह जाते थे[4]। सेवा की यह लम्बी अवधि कर्तव्य परायणता का संकेत करती है, किन्तु कभी इसमें दोष भी आ जाते थे। लेख नं० ५५० के अनुसार स्वामी ने दास के पास दो-तीन बार संदेश भेजा किन्तु दास ने कोई उत्तर नहीं दिया[5]। किन्तु ऐसे उदाहरण यदा कदा ही मिलते हैं।

भारतीय शास्त्रकारों के अनुसार दास स्वयं दूसरे के दास होकर स्वतंत्र सम्पत्ति के अधिकारी नहीं हो सकते थे। दास जो कुछ भी उपार्जन करे, वह उसकी नहीं वरन् उसके स्वामी की

१—लेख नं० ३९ "दझि चिमिकए नम एदेव अन अप्रोहिति धितु कणेयश दझन उतिति दित स उनिति तेष वंति"

२—लेख नं० ३१—यो आपने गोठकर्य पूवे दझ जंन

३—लेख नं० ३१—तैस वचनेन कर्तव्य न हंचि तदे अतिक्रमिदवो

४—लेख नं० ३६४, ५५०

५—दशम मत्र वर्ण हुद कंगस प्रमंमि कमवेति...तस प्रचे द्विति त्रितिगन इमदे संदिशति न हंचि इश अगछति।

आर्थिक जीवन

सम्पत्ति समझी जाती थी[1]। यहाँ तक कि अपनी पत्नी और बच्चे के अधिकार से भी दास वंचित थे[2]।

खरोष्ठी लेख चीनी तुर्किस्तान के दासों की कुछ भिन्न ही परिपाटी बताते हैं। भारत की भाँति वहाँ के दासों में आर्थिक दृष्टि से इतनी अधीनता नहीं मालूम होती। अपने मूल्य के प्रतिदान में पशु देकर बहुधा दास अपने स्वामी की दासता से मुक्त हो जाते थे। लेख नं० ५८५ एक दास का उल्लेख करता है, जिसने अपने मूल्य के प्रतिदान में एक "मनुष्य"[3] और ६ भेड़ देकर अपने को मुक्त करने की चेष्टा की[4]।

लेखों में दास द्वारा सम्पत्ति के क्रय-विक्रय का उल्लेख आया है। लेख नं० ३६ के अनुसार अमुक व्यक्ति ने अपने दास के

१—पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र भाग २, पृ० १८६ "दासस्य तु धनं यत्स्यात् स्वामी तस्य प्रभुः स्मृतः" कात्यायन

२—भार्यापुत्रदासश्च त्रयः स्वाधनाः स्मृताः। येसमधिगच्छन्ति यस्य ते तस्य तद्धनम्। मनु पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग २ पृष्ठ १८४।

३—लेख में "मनुश" से तात्पर्य मनुष्य का है। अतः दास को अपनी मुक्ति के लिए अपने एवज में दूसरा आदमी अपने स्वामी को देना होता था, इस प्रकार दास अपनी मुक्ति एक नये दास को देकर ही पा सकता था और साथ ही मानों क्षतिपूर्ति के रूप में ६ भेड़ आदि भी देता था।

४—लेख नं० ५८५—अंङ्गिय नाम तेन उथित तनु प्रनस लोते तित मनुश चिम्गेय नम पशवि ४२ एदे पशु हुतंति १०२ एदे कर्य महि न रुचते।

खलिहान से कुछ सम्पत्ति ली[१]। दास की सम्पत्ति के अन्तर्गत भूमि, अश्व, कम्बल अथवा लोई, और बुने हुए कपड़े के नाम आते हैं[२]। लेख नं० ३३ से ज्ञात होता है कि आवश्यकता पड़ने पर भी स्वामी अपने दास की सम्पत्ति को नहीं ले सकता था और यदि किसी स्वामी ने समय की माँग के कारण दास से सम्पत्ति ली भी हो तो पुनः उसे वापिस कर देनी होती थी[३]।

इस सम्बन्ध में राजा की उदारता भी उल्लेखनीय है। लेख नं० २४ राजा के द्वारा सर्पिगस नामक दास को जमीन और घर दिए जाने का उल्लेख करता है[४]।

सम्पत्ति के क्रय-विक्रय में बहुधा दासों को उनके स्वामी से सहायता मिला करती थी[५]। इसके अतिरिक्त दासों के मध्य भी जमीन का क्रय-विक्रय होता था। लेख नं० ३३ के अनुसार एक दास ने १३ "कुथल[६]" जोती हुई भूमि "अचुन्य" नाम के

१—बरो, ने लेख नं० ३६ की पंक्तियों में दासवत यस गोठदे अर्थ गिडति य...द किलमु एशनि प्रथ एद विवद शवथेन...का अनुवाद इस अर्थ में किया है।

२—लेख नं० २४, ३२७

३—लेख नं० ३३

४—लेख नं० २४ "देवपुगस पदमुलदे गोठभुमलदे गोठ भूम लवग तदे सर्पिगस

५—लेख नं० ५४७

६—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८३
"कुथल" शब्द का अर्थ यद्यपि कठिन है किन्तु अनुमान किया गया कि भूमि मापने का यह एक विशेष माप है।

दास के हाथ बेची। लेखों में ऋण के रूप में दास को अश्व दिए जाने का विवरण है। "अश्य ऋन" लेख लेख नं० २४

लेखों के इन प्रसंगों से दासों का आर्थिक जीवन, समकालीन देशों की अपेक्षा कहीं अधिक सुखमय मालूम होता है।

लेख चीनी तुर्किस्तान के भिक्षुओं के पारिवारिक जीवन का उल्लेख करते हैं, जिसमें दास और सम्पत्ति के साथ उनके ऐश-आराम का विवरण मिलता है। मध्य एशिया के बौद्ध भिक्षुओं का जीवन भारत और चीन के भिक्षु जीवन से सर्वथा भिन्न था।

कई भिक्षु दास रखा करते थे और बहुधा भिक्षुओं को भी दास के रूप में कार्य करने का उदाहरण मिलता है। लेख नं० १५२ में "श्रमंन धर्मप्रिय" व्यक्ति को दास बताया गया[1]। चडोटा नीया के भिक्षु संघ के द्वारा दासों के अदल-बदल के सम्बन्ध में कुछ नियम बनाए जाने का उल्लेख है[1]।

इसके अतिरिक्त दासों के निजी धार्मिक जीवन अथवा उनकी शिक्षा आदि का विवरण खरोष्ठी लेखों से नहीं मिलता। ह्वेनत्सांग के यात्रा-वृत्तान्त में चीनी तुर्किस्तान प्रदेशों की उच्च और प्रगतिशील संस्कृति का उल्लेख है। लोगों की प्रकृति सरल, स्निग्ध और संगीतप्रिय थी तथा उनमें वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रवृत्ति भी तिहित थी[2]।

१—लेख नं० १५२ "श्रमंन धर्मप्रिय नाम सछवए गोठंमि बुच्यति यहि एव सुमत अत्र एव्यति...दझ असि महि वंति वद विक्रित सर्व निचेय किडम एव श्रमं अहुनो दहि होतु"

२—ए० स्टाईन, एशियंट खोतान—पृष्ठ १७४ ह्वेन-त्सांग के विवरण उल्लेखनीय है, एशियंट खोतान में विभिन्न स्थलों पर ह्वेनत्सांग का उल्लेख है।

समाज सुसंगठित और विकसित था। खरोष्ठी लेखों के विभिन्न विषय उनके नियमित सामाजिक जीवन का चित्र देते हैं, जिन्हें हम अगले अध्यायों में देखेंगे। लोग धर्मप्रिय थे और धर्म की सत्ता को समझते थे। हाँ, यह नहीं कह सकते कि उनके धर्म अन्धविश्वासों से बिल्कुल अछूते थे[1]। धर्म को उच्च मानकर लोग धर्म के नाम पर राज्य विधान के नियमों का पालन करते थे[2]।

समाज में साधारण रूप से धन और प्रतिष्ठा की दृष्टि से सभी प्रकार के लोगों का समावेश था। आपस में एक दूसरे की स्थिति को स्वीकार करते हुए, उनके मान और अपमान का ध्यान रखते हुए व्यवहार करते थे। यह उनकी शिष्टता का ही लक्षण था। यद्यपि कभी-कभी सामाजिक अनाचार और अत्याचार का भी उल्लेख हुआ है। किन्तु वह भी समाज का सहज रूप ही समझा जाता था। इस प्रकार की अव्यवस्था के लिए राज्य में न्याय—विभाग की व्यवस्था थी। ऐसे व्यक्तियों के सुधार के लिए समाज सदा तत्पर रहता था, न कि उदासीन। अतः यह नहीं कह सकते कि समाज में पूरी छूट थी, लोग मनमानी करते थे, अथवा हिन्दू शास्त्रकारों के शब्दों में मात्स्यन्याय था।

ह्वेनत्सांग के उल्लेख के अतिरिक्त खरोष्ठी लेखों से भी मालूम होता है कि लोग सीधे-सादे कृषक ही अधिक थे[3]। लेखों के निजी और राजकीय सत्रों से भी आपस में आदर और सहज स्नेह की भावना का अनुमान होता है।

१—देखें अध्याय ८ में

२—देखें अध्याय ७ में

३—ह्वेनत्सांग ने काशगर, खोतान कूचा, प्रदेशों का जैसा चित्रण दिया है, वह वहां के शिक्षित समाज का परिचायक है। देखिए, स्टाईन, एशियंट खोतान पृष्ठ ६९ और १७४

अध्याय—तृतीय

परिवार

परिवार समाज का प्राथमिक रूप है। समाज की रचना और व्यवस्था परिवार पर आधारित है। मध्यएशिया के परिवार सुव्यवस्थित और सुखी थे[1]। वरगेस और लाक के अनुसार परिवार के अन्तर्गत उन व्यक्तियों का समावेश होता है, जिनका सम्बन्ध विवाह के बन्धन से हुआ हो, अथवा जिनसे खून का सम्बन्ध हो और जो गोद लिए जाने के कारण परिवार के प्राणियों की गणना में आ गए हों। एक गृह के अन्दर इन सभी प्राणियों—माता-पिता, भाई-बहन, पुत्र-पुत्री—का समान रूप से संस्कृति, शिक्षा आदि से संबद्ध विकास हो। निष्कर्ष यह कि जो एक गृहसंचालक द्वारा संचालित हो, वह परिवार कहा जायगा[2]।

स्वरूप

खरोष्ठी लेख चीनी तुर्किस्तान के परिवार का उपर्युक्त स्वरूप उल्लिखित करते हैं। माता, पत्नी, पुत्र और पुत्री के साथ गृहस्वामी को न्यायालय में बुलाये जाने की सूचना लेख नं० ४५० से मिलती है। "कर" नहीं देने के कारण उक्त व्यक्ति का घर और उसकी भूमि बेच दी जाने की आज्ञा दी गई और साथ ही उसे परिवार के इन व्यक्तियों के साथ बुलाया

१—स्टाईन, एशियंट खोतान पृष्ठ १७३-१७९ चन्द्रगुप्त वेदालंकार, "बृहत्तर भारत" पृष्ठ ७३-१०६

२—प्रभु, हिन्दू सोशल आर्गेनाइजेशन पृष्ठ

गया[१]। माता, पत्नी, पुत्र और पुत्री गृहस्वामी की संरक्षता में रहने वाले एक ही परिवार के प्राणी थे। ३६२ नं० के लेख से स्पष्ट रूप से परिवार का उल्लेख मिलता है[२]। लेख में उल्लिखित "*विशजितग*" कुल संस्कृत विशः का अर्थ देता है[३]। लेख के अनुसार खोषा ने अपने परिवार के सभी प्राणियों को चडोन[४] नीया ले जाकर स्थित किया। पुनः सगमोवी की पत्नी, पुत्र, पुत्री और दास का एक साथ उल्लेख है, जिससे एक परिवार के स्वरूप का परिचय मिलता है[५]। अधिकांश परिवार में गृह के कार्य के हेतु, दास रखने की प्रथा थी[६]। गोद लिए हुए बालक अथवा बालिका भी गृहस्वामी के पुत्र और पुत्री की ही भाँति

१—लेख नं० ४५० "विक्रिनंनए परिहर ओडिदेमि तहि समदुए भर्ये पुत्र धिदरेहि इश अर्गदवो"

२—लेख नं० ३६२, "विसजितर्ग एष पुन चल्यदनेदे गोठदर, नित अत्र अर्वोतमि असघनेअरुएदे खोसस गोठदरे न इंचि"

३—बरो, लैंग्वेज

४—चीनी तुर्किस्तान के नीया प्रदेश के लिए खरोष्ठी लेखों में "चडोता" का उल्लेख है एस० नोबल, ए खरोष्ठी इन्सक्रिपशन फ्राम इन्दरे वी० एस० ओ० एस० भाग ६ पृष्ठ ४४५ और बरो, लैंग्वेज, इन्ट्रोडक्शन

५—लेख नं० ६२१—"त यो पुन एदस् सगमोवि भर्य पुत्रजिदर यं च दसि सर्व एदस सगमोवि मुषय प्रसवित"

६—लेख नं० ३१—"यो ओपगे गोठथर्य प्रचे दश जंन अनवश्यति लेख नं० ३१

होती थी[1]। लेख नं० ११३ में पौत्र (*नपतु*) का उल्लेख है। लेख के वाक्य अधूरे हैं जो पठनीय है उसके अनुसार "चूँकि तुम संघ १ के पौत्र हो•••" से इतना ही अनुमान होता है कि पौत्र का समावेश भी परिवार के अन्तर्गत था, यद्यपि यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि यहाँ पर पौत्र एक ही गृह में रहने वाला था अथवा नहीं। लेख नं० ५२८ में सुनंद ने राजा को सूचित किया कि उसकी दादी ने एक स्त्री को गोद लिया। बरों ने इस लेख की पंक्ति "*स च अहुनो इश सुनंद वित्रवेति यथ एदस महुलि रमोंति अए नम स्त्रि रमश्रि उनिदि गिड तय रमश्रिअये*" में उल्लिखित *महुलि* दादी के अर्थ में प्रयुक्त हुआ शब्द बताया[3]।

इन प्रसंगों से स्पष्ट है कि चीनी तुर्किस्तान के परिवार पति-पत्नी और बच्चे तक ही सीमित नहीं थे बल्कि दादी, दादा और पौत्र भी एक ही परिवार के अंग थे। साथ ही यह संबंध वहाँ के लोगों के कुल का भी संकेत करता है। लोगों में अपने संबंधियों के लिए भक्ति तो थी ही साथ ही पुत्र की कर्तव्य-परायणता भी मालूम होती है। प्राचीन भारत में संयुक्त परिवार का प्रचलन था। चीनी तुर्किस्तान के परिवार भी इस दृष्टि से विस्तृत और उदार थे।

१—लेख नं० ३३१—"कुऊछिरस कचन दित प्रियपतस त्वेन छिंनितम अंस। स कुडो कचनस न विक्रिनिदवो न व वोथ विदवो नेवि गोठदे-दुर निखलिदवो

२—लेख नं० ११३—"घष न पितु सि साध" डा० बरो ने नापितु एक शब्द बताया जिसका अर्थ पौत्र है—ट्रान्सलेशन, पृष्ठ २१

३—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ १०९

लेख नं० ३६२ से गृहस्वामी की जिम्मेदारी का संकेत मिलता है। खोषा ने अपने परिवार की रक्षा के हेतु परिवार के लोगों को चडोत नीया में रखा, जहाँ राज्य की ओर से उसके परिवार की देख-रेख की गई। इस लेख से परिवार का स्वरूप तो मिलता ही है साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि लोग एक साथ, एक गृह के अन्दर रह कर परिवार के उन जिम्मेवारियों को समझते थे, जो एक शिष्ट परिवार के लिए आवश्यक है। अतः चीनी तुर्किस्तान के समाज में परिवार के स्वरूप का परिचय मात्र ही नहीं, वरन् उनके संगठित कार्य का भी ज्ञान होता है। खोषा ने गृहस्वामी के नाते अपना कर्तव्य समझ कर ही परिवार की रक्षा का प्रबन्ध किया। अतः चीनी तुर्किस्तान के परिवार की समता सहज ही परिवार के उस स्वरूप से कर सकते हैं, जिसकी परिभाषा पाश्चात्य विद्वानों ने दी है।

विवाह-संस्कार की सामाजिक आवश्यकता मध्यएशिया के समाज ने भी उस काल में समझा। कुल अथवा परिवार की स्थापना वैवाहिक बंधन का ही प्रमाण है।

विवाह

गृह का निर्माण वधू के आने से आरंभ होता है। वधू गृह की गृहस्वामिनी और वर गृहस्वामी होता है। भारतीय आचार्यों ने बड़े ही विस्तार से विवाह की महत्ता का उल्लेख किया है। भारतीय स्मृतिकारों ने विवाह के आठ प्रकार बताये हैं[1]।

१—पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र भाग २ पृष्ठ ५१६
आर० बी० पाण्डेय, हिन्दू संस्कार पृष्ठ २१६

गृहस्थ आश्रम में गृहस्वामी और गृहस्वामिनी के कर्तव्य और अधिकार का उल्लेख भारतीय शास्त्रकारों ने सामाजिक, धार्मिक,

चीनी तुर्किस्तान के परिवार में विवाह यद्यपि जाति और गोत्र की सीमा से सीमित नहीं मालूम होता[१], किन्तु शास्त्रीय और अशास्त्रीय अथवा वैधानिक विवाह का भेद लेखों से स्पष्ट होता है। लेख नं० ४७४ के अनुसार यदि वधू का विवाह शास्त्रीय रीति से हुआ हो तो वधू के बच्चे पैतृक सम्पत्ति के अधिकारी हो सकते हैं। शास्त्रीय विवाह में वधू-शुल्क *लोते* और मुकेषि देने की आवश्यक प्रथा थी[२]।

खरोष्ठी लेख एक पत्नी-प्रथा का विवरण देते हैं। बहुपत्नी-प्रथा का उल्लेख वहाँ नहीं मिलता है। लेख नं० ६२१ से ज्ञात होता है कि एक कुम्हार कुलल के पुत्र ने अपनी पत्नी, बच्चे और दास के होते हुए भी एक भिक्षु की कन्या को पत्नी के रूप में ग्रहण किया। और स्वयं इस नवविवाहिता पत्नी को लेकर कूची-कूचा प्रदेश भाग गया[३]। अनुमानतः समाज में यह विवाह मान्य नहीं था। यह समाज के नियमों के उल्लंघन करनेवालों का ही एक उदाहरण होगा, इसे नियम नहीं कह सकते।

और राजनैतिक दृष्टिकोण से जिस प्रकार किया है, वैसा उल्लेख खरोष्ठी लेखों से इस विषय का नहीं मिलता, यद्यपि "विवाह-संस्कार" समाज का अभिन्न विषय था।

१—देखिए, आगे चतुर्थ अध्याय में

२—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ११९ और बी० एस० ओ० एस० भाग ६ पृष्ठ ४२३-५२७ "लोते" और "मुकेषि" वधू-शुल्क के रूप में दिए जाते थे। चतुर्थ अध्याय में विस्तार से,

३—लेख नं० ६२१ "श्रमन सुंदरस धितु सुप्रिय नम भर्य अनित चंमत्रेन तदे पचे एष सागमोवी सुप्रियए च चतोअस गोठदे कुचि रजंमि पलयितंति चिर कलंमि कुचि रजंमि

पुत्र सदा से कुल परम्परा का द्योतक माना गया है। भारत के प्राचीन आचार्यों ने कहा है कि पुत्र अपने वंश की रक्षा करता है अतः वह पूत है, और इसीलिए वह पुत्र कहा गया है[1]।

परिवार में पुत्र का स्थान

एतरेय ब्राह्मण में पुत्र शब्द की व्युत्पत्ति देते हुए कहा है कि 'पुंनाम्नो नरकात् त्रायत इति पुत्रः' अर्थात् वह पुत्र इसलिए है कि अपने पितरों को पुं नामक नरक में जाने से रक्षा करता है। खरोष्ठी लेख चीनी तुर्किस्तान में भी पुत्र के लिए पुत्र शब्द के व्यवहार का ही उल्लेख करते हैं। संभवतः पुत्र रक्षक तुल्य है, इसलिए चीनी तुर्किस्तान के समाज ने भी पूत के लिए पुत्र शब्द का अनुकरण भारत से किया है।

पुत्र-जन्म चीनी तुर्किस्तान के लिए आनन्द का विषय था। परिवार में पुत्र के जन्म पर खुशी प्रकट करने का एक उदाहरण लेख नं० ७०२ से मिलता है। इस लेख में कहा गया है कि पुत्र का जन्म हुआ है, अतः तुम सबों को खुश होना चाहिए[2]।

पिता की अनुपस्थिति में ज्येष्ठ पुत्र कुल का रक्षक, संचालक और अभिभावक होता था, इसका अनुमान लेख नं० ३१ के प्रसंग के आधार पर कर सकते हैं[3]। पुत्र पिता का सहायक हुआ करता था। भिक्षु बुद्धशीर और उसका पुत्र बुघोस दोनों ने मिलकर अपनी कुछ भूमि एक दूसरे भिक्षु को बेच दी। हो सकता है कि पिता और पुत्र की साथ सम्पत्ति हो

१—पुत्र के प्रति ऐसी धारणा चीन, भारत, रोम आदि देशों में भी थी। पितृ प्रधान परिवार में विशेष कर पुत्र का महत्व वंश की रक्षा के हेतु माना गया है। "मनु" ने पुत्र का अर्थ पूत बताया। पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र

२—लेख नं० ७०२ "पुत्र जात सर्वेहि षातेन भवितव्य तह न चिरस्य हद्दति"

३—लेख नं० ३१

और दोनों ने इसकी साथ बिक्री की हो, या पुत्र ने पिता के सहायक के रूप में भूमि बिक्री में साथ दिया हो। लेख नं० २४३ से ज्ञात है कि पुत्र ने अपने पिता "*चोझवो शमसेन*" को उपहार में एक अश्व दिया और इसके प्रतिदान में पुत्र को दो भेड़, तीन हस्त वर्ष मिले[२]। पिता और पुत्र के मध्य उपहार का यह दान प्रतिदान स्नेह का परिचायक है। इसके विपरीत कुछ दुष्ट पुत्रों का भी उल्लेख मिलता है। ३३९ नं० के लेख में एक ऐसे पुत्र का उल्लेख है, जिसने अपने पिता का हाथ-पैर बांध कर उसे पीटा[३]।

पुत्री का स्थान

पुत्री पराई निधि होने के कारण मध्यएशिया के समाज में भी भारस्वरूप थी। विवाह के पहले तक कन्या, माता-पिता की संरक्षता में रहती थी, और विवाह के पश्चात् पति के अधिकार में थीं। कन्या के रूप में वह पिता की सम्पत्ति स्वरूप थी, जिसका पिता अपनी इच्छानुसार चल सम्पत्ति की भांति लेन-देन कर सकता था। इस प्रकार के कई उदाहरण लेखों से मिलते हैं[४]।

माता और पिता के लिए "*मतु* और *पितु*" के सम्बोधन से चीनी तुर्किस्तान के लोग परिचित थे[५]। *पितर* और *पितरन*

१—लेख नं० ६९९ श्रमंन बुधशिर नम पुत्र बुधोस नम तेष उथविदति श्रमंन कूटजदग बुधफमअस वंति मिषि विक्रिद तत्र...

२—लेख नं० २४३ "स च झा देति स च अहुनों इस लर्षु विञवेति यथ एदस पितु चोझवो शमसेनस चक्वल अंस लसि दित हस्त प्रतिकर कद"

३—लेख नं० ३३९ "अन एदस पितु कुनगेयस हस्त पदमि णोन"

४—देखिए, चतुर्थ अध्याय में।

५—लेख नं० १६४ "प्रिय पितु चोझवो-ल्पिपेय प्रियमतु सर्पिनये...

शब्द का उल्लेख भी माता-पिता के अर्थ में है[१]। खरोष्ठी लेखों में प्रिय पिता, प्रिय माता, प्रिय भाई और प्रिय बहन के सम्बोधन से एफ० डब्लू थामस ने कहा कि यह एक साधारण और निकट सम्बन्ध के साथ ही सहज स्नेह का भी परिचय देता है, जिसका वहाँ के समाज में विकास हो चुका था[२]। विवाह के पूर्व पिता अपनी पुत्री को ऋण के रूप में, उपहार में, दान में, किसी भी रूप में किसी भी व्यक्ति को वह दे सकता था। संतान के भरण-पोषण और उनकी रक्षा का भार माता-पिता के ऊपर था। ३६२ नं० के लेख से मालूम होता है कि गृहस्वामी ने परिवार की रक्षा के लिए ही अपने परिवार को खोतान से ले जाकर "चडोत" नीया में स्थित किया, जहाँ राज्य की ओर से परिवार की रक्षा हुई[३]। भारत के प्राचीन आचार्यों ने माता-पिता का संतान के प्रति कर्तव्य और अधिकार का उल्लेख बड़े ही विस्तार से किया है किन्तु खरोष्ठी लेखों से इस विषय के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं मिलती, यद्यपि पिता को अपनी संतान का पूरा उत्तरदायित्व था।

माता-पिता के अधिकार और कर्तव्य

शिशु के गोद लेने की परिपाटी प्राचीन काल से ही भारत और पाश्चात्य देशों के समाजों में मिलती है। निज संतान के अभाव में ही दूसरे बच्चे को गोद लेकर अपने वंश एवं

१—लेख नं० ७७८ और ७६९ वी० एस० ओ० एस० भाग ९, फरदर डाक्यूमेन्ट फ्राम नीया पृष्ठ ११३-११९

२—एफ० डब्लू० थामस, अक्टा० ओ० १२ पृष्ठ ६३

३—लेख नं० ३६२ "गोथदरनित अश्रचडोतामि असवनये एदे खोषास गोथदरे न इंचि खोंतानभि ओडिदव्य अनेव..."

गोद लेने की प्रथा

सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनाने की प्रथा लोगों ने आरंभ की। राजवंश में विशेषरूप से राजगद्दी के उत्तराधिकारी के लिए राजकुमार का होना आवश्यक माना जाता था। भारत का प्राचीन इतिहास राजवंश के दत्तक पुत्रों का उल्लेख करता है। भारतीय शास्त्रकारों ने दत्तक पुत्र को निजपुत्र तुल्य सभी अधिकार देने का उल्लेख किया है[1]।

चीनी तुर्किस्तान के समाज में यह प्रथा सर्वत्र प्रचलित थी। खरोष्ठी लेखों में बहुधा शिशु के गोद लेने अथवा देने का उल्लेख है। उदाहरण स्वरूप—

१—लेख नं० ११ के अनुसार "लिपपेय" और "कुंगेय" बच्चे के गोद लेने के कारण मतभेद हुआ।

२—"ओणे" ने जो विवरण दिया, उससे ज्ञात है कि उसका पुत्र "उपसेन" अपने जन्म के पश्चात् "लिपमो" नामक व्यक्ति द्वारा गोद लिया गया[3]।

३—"चिमिकये" नाम की एक दासी ने अपनी कन्या को "कर्ण" नामक एक दास को गोद लेने के लिए दिया[4]।

१—विशद विवरण के लिए पी० वी० काने, हिन्दू धर्मशास्त्र, पृष्ठ ६६२-६६९

२—लेख नं० ११ "इश लिपपेय गरहनि पथ एदस अपिसये नम उनेयग प्रचे कुंगेयस प्रचे कुगेयस परिदे विवद यहि"

३—लेख नं० ३१ "यो ओपगे गोठ कर्य प्रचे दझर्ज न अनव्यति तस बचनेन कर्तव्य न इंचि नेद अतिक्रमिदवो एष उपसेन तत्रगोठंमि यथ उनेयग"

४—लेख नं० ३९—"यथ एदेष दझि चिमिकये नम एदेष अन अप्रोछिति धितु कपगेयस दझन उनिति दित"

४—एक स्त्री ने अपने पुत्र को जो ५ "दिठि" ऊँचा था, कंचन नाम के व्यक्ति को गोद में दिया[1]।

५—लेख नं० ५५३ के उल्लेखानुसार "सुगीय" ने भिक्षु "बुद्धमित्र" के पुत्र पत्रय को गोद लिया।

गोद लिए हुए बच्चे परिवार के ही अंग माने जाते थे। लेख नं० ५६९ उल्लेख चीनी तुर्किस्तान के परिवार में गोद ली हुई कन्या और बालक के प्रति विशेष सम्बन्ध का उल्लेख देते हैं। लेख के अनुसार गोद लिए हुए बालक दास के रूप में किसी अन्य व्यक्ति को नहीं दिए जा सकते थे, न बेचे जा सकते थे और न बंधक के रूप में उन्हें देने का अधिकार था[2]। गोद लिये हुए बच्चे के प्रति माता-पिता विशेष उदार होते थे, साथ ही इन बच्चों के लिए अभिभावकों का उत्तरदायित्व भी बढ़ जाता था। उन्हें राज्य विधान के नियमों के अनुसार ही चलना होता था। खरोष्ठी लेखों से यह ज्ञात है कि माता-पिता अपनी कन्या को स्वेच्छा से मारते-पीटते, बेचते थे, इस प्रकार के व्यवहार के लिए माता-पिता के ऊपर किसी प्रकार का दबाव नहीं था ऐसा मालूम होता है। किन्तु गोद लिए शिशु के साथ के व्यवहार में इतनी स्वतंत्रता नहीं थी फिर भी गोद लिया हुआ बालक निज संतान तुल्य माना जाता था।

१—लेख नं० ४१९—"स स्त्रियत्सिन मनुश कचनस पुत्र उनेयग तित. षम्नेर पंच दिथि छिरस अंस वितो तत्र च"

बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ९८, "दिठि" लम्बाई नापने का एक माप है जो संस्कृत दिष्टि का प्रतीक है।

२—लेख नं० ५६९—"सछि कुडि चगु शदविद चनेय स च एष षमंनेर उनिदग न दश कडवो न विक्रिनिदवो न बंधोव थविदवो"

दत्तक पुत्र के अधिकार और कर्त्तव्य की विवेचना के लिए लेखों से पर्याप्त साधन नहीं मिलता है। लेख नं० ३१ ही सम्पूर्ण लेखों में एक उदाहरण देता है। लेख के अनुसार "उपसेन" "लियमो" का दत्तक पुत्र था। "लियमो" की मृत्यु के पश्चात् "उपसेन" गृहस्वामी के रूप में बनाया गया क्योंकि वह "लियमों" का ज्येष्ठ पुत्र था[२]। इस लेख से गोद लिए हुए बालक का पुत्र की भाँति अधिकार का संकेत मिलता है। "ज्येष्ठ पुत्र" "लियमों" के अन्य पुत्रों का संकेत देता है, किन्तु यह निश्चित नहीं कि बाकी उसके अपने ही पुत्र हों।

भारत में स्त्रियों को गोद लेने अथवा देने का स्वतंत्र अधिकार नहीं था। प्राचीन हिन्दू विधान के अनुसार बच्चे के पिता को अपने पुत्र अथवा पुत्री को गोद देने का अधिकार था, माता की आज्ञा की आवश्यकता नहीं थी। किन्तु माता को अपने पति अथवा बच्चे के पिता की आज्ञा के बिना, (यदि वह जीवित हो) गोद देने का अधिकार नहीं था। पति की मृत्यु के पश्चात् या यदि पति पागल हो तभी पत्नी अपने बच्चे को अपनी इच्छा से गोद दे सकती थी[३]। किन्तु चीनी तुर्किस्तान में, जैसा कि खरोष्ठी लेखों से ज्ञात है कि स्त्रियां अपनी इच्छा से अपनी संतान को किसी अन्य व्यक्ति के गोद दिया करती थीं,— यह वहां की आम प्रथा थी।

१—देखिए, चतुर्थ अध्याय में—

२—लेख नं० ३१ "यो ओपगे गोठकर्य प्रचे दञ्ज अनं अनवष्यति तस वचनेन कर्तव्य न इंचि नदे अति क्रमिदवो एष उपसेन तत्र गोठमि यथ उनेयग पुत्र संज्ञं जनिदव्य यो अबषिठे चगेतिए रजधम क,.." घम करिष्यति एम एदेष कर्त्तव्य एष संचय किंचि तत्र मंत्र सियति"

३—पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, पृष्ठ ६६६

दासियों को अपनी कन्या या पुत्रको अपने स्वामी की आज्ञा के बिना गोद देने का अधिकार संभवतः नहीं था। क्योंकि लेख नं० ३९ में "लिपपेय" ने राजा को यह सूचना दी कि उसकी दासी ने उसकी आज्ञा के बिना ही अपनी कन्या को गोद दिया। "दासी" स्वतंत्र नहीं थी। अतः उनके अधिकार भी सीमित थे।

गोद लेने के प्रसंग में खरोष्ठी लेख "*कुठछिर*" सांकेतिक शब्द का उल्लेख करता है[१], जो बच्चे के दूध के मूल्य के लिए किया गया है। "*कुठछिर*" वास्तव में लोगों के द्वारा शिशु के भोजन स्वरूप मूल्य पिता को देने के लिए बनाया गया था[२]। "*कुठछिर*" के शर्त पर ही गोद लेने की प्रथा कानून को मंजूर थी। लेख नं० ३३१ के अनुसार "कचन" ने "प्रियपत" से एक कन्या गोद ली, और कन्या का "कुठछिर" अर्थात् दूध के मूल्य में एक घोड़ा "प्रियपत" को दिया, अतः अब वह कानून की दृष्टि से भी "कंचन" की अपनी कन्या की भांति हुई[३]। राज्य विधान की दृष्टि से "*कुठछिर*" का देना आवश्यक था। शिशु के गोद लेने और देने का कार्य कई बार न्यायालय में हुआ करता था। लेख नं० ४५ के विवरण के अनुसार शिशु के "*कुठछिर*" का निर्णय न्यायालय में हुआ। लेख नं० ४१५ के

१—लेख नं० ३४ उनिद वर्धिद कुठछिरस एदस न दित यथि…

लेख नं० ४५ कुठछिरस तिर्ष अंस व्योछिनिदग एद प्रचे

२—बरो, ने "कुठछिर" का अनुवाद किया "मिल्क फी" ट्रान्सलेशन

३—लेख नं० ३३१ "कुछिरस कचन दिन प्रियपतस त्वेन छिनितग अंश १ स कुडी कचन…

अनुसार शिशु के "*कुठछिर*" में एक "*विटो*"[1] अश्व दिया गया, जिसका निर्णय "कोझवो सोंजक" के सम्मुख हुआ[2]।

अतः इन प्रसंगों से चीनी तुर्किस्तान के परिवार में गोद लेने और देने की सर्व प्रचलित प्रथा का स्पष्ट विवरण मिलता है।

ह्वेन-त्सांग ने खोतान का विवरण देते हुए लिखा कि "यहाँ के निवासी सरल, खुश और अपने जीवन से सन्तुष्ट हैं[3]"।

परिवार की आर्थिक स्थिति

आर्थिक जीवन में, इनकी आय का मुख्य साधन पशु-पालन और कृषि था। इसके अतिरिक्त व्यापार आदि का भी उल्लेख है[4]। खरोष्ठी लेखों से ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता कि वहाँ की साधारण जनता निर्धन अथवा आर्थिक अभाव से दुखित हो। सामान्य रूप से लोग अपनी स्थिति से सन्तुष्ट थे, अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए लोग श्रम करते थे, और उपार्जित धन ही उनकी सम्पत्ति थी।

खरोष्ठी लेख दो प्रकार की सम्पत्ति का उल्लेख करते हैं, जिसे स्थावर और जंगम इन दो श्रेणियों में विभाजित किया

१—लेख के प्रसंग "कुठछिर" में दिए गए अश्व के साथ "विटो" का व्यवहार है अतः "विटो" उन अश्वों को संकेत करता है, जिन्हें दूध के मूल्य स्वरूप दिया जाता हो। बरो, लेंग्वेज, पृष्ठ

२—लेख नं० ४१९ "पंच तिथि छिरस तित अंश विटो तत्रच पूरठिद कोझवो सोंजक अन्ये···"

"कुठिछर" की व्याख्या थामस अेका आ १२ पृष्ठ ३७

३—ए० स्टाइन, एशियंट खोतान, पृष्ठ १७४

४—"व्यवसाय" के छठें अध्याय में

जा सकता है[1]। "स्थावर" सम्पत्ति के अन्तर्गत भारतीय शास्त्रकारों के अनुसार जमीन-जायदाद, घर आदि स्थूल पदार्थों का समावेश है और जंगम सम्पत्ति में चलायमान गतिशील पदार्थों की गणना की जाती है, जिसे बंधक के रूप में रखा जा सकता हो अथवा जो लेन-देन की वस्तु हो। खरोष्ठी लेखों से ज्ञात होता है कि चीनी तुर्किस्तान के लोगों ने भी सम्पत्ति के इस भेद का अनुकरण किया। लेख नं० १८७ के सम्पत्ति विभाजन में भूमि के अतिरिक्त, वस्त्र, विस्तर आदि का उल्लेख है। ऊनी वस्त्र, बुने हुए कपड़े, पहनने के रेशमी आदि भिन्न-भिन्न वस्त्रों की गणना सम्पत्ति के रूप में है[2]। क्योंकि कर के मूल्य में बहुधा इन वस्तुओं को देकर लोग करमुक्त होते थे। कम्बल, कालीन, नमदा आदि तैयार हुए माल वास्तव में, जंगम सम्पत्ति ही थी, जिनका क्रय-विक्रय उचित मूल्य पर होता था।

सम्पत्ति

इसके अतिरिक्त स्त्रियाँ, दास और पशु का उल्लेख भी जंगम सम्पत्ति के रूप में है। स्त्रियों का क्रय-विक्रय कभी पशु के मूल्य पर और कभी सिक्कों के मूल्य पर सम्पत्ति की भाँति किया जाता था[3]। लेख नं० ४३७ की पंक्ति है अब

१—स्थावर और जंगम स्मृति द्वारा विभाजित सम्पत्ति के दो स्वरूप है, पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र भाग ३ पृष्ठ ५७४

२—लेख नं० ३१८ दन्न कचनोस परिदे निखलिद सुजिनर्कित विद्प न दंस त प्रिघ कंचुलि षर्मिन चित्रग त्योक्म नपेत बंनिदग कुवन प्रहुनि षन पट मह कंचुलि"

३—लेख नं० ५८९ "रम्षोंकस बंति कुडि स्मित्सये नम विक्रित तित मुलि उट १ एकबर्षग चपरिश मूलियेन लिप पिंत्सए प्गित"

"सगनपये" नाम की कन्या "भट्ठिगे" नामक व्यक्ति की सम्पत्ति हुई[1]। दासों का दान-प्रतिदान और क्रय-विक्रय भी समाज में खुलेआम होता था[2]।

जमीन-जायदाद, खेती-बारी घर आदि की गणना अचल स्थावर सम्पत्ति के अन्तर्गत थीं। भारत में आज भी देहातों में सम्पत्ति का अर्थ मुख्य रूप से जमीन-जायदाद के अर्थ में लिया जाता है। सम्पत्ति का मूल इसे ही मानते हैं और साधारणत: इसी के आधार पर लोगों के आर्थिक स्थिति का स्तर समझते हैं।

पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी संतान होती हैं। यह प्राचीन काल से ही भारतीय शास्त्रकारों द्वारा बनाया गया सिद्धान्त है। भारतीय हिन्दू शास्त्रकारों ने बड़े ही विस्तार से इन नियमों पर विचार किया, और उसका पालन भी प्राचीन भारत के लोगों से करवाया। तैत्तिरेय संहिता और ब्राह्मण में पैतृक सम्पत्ति के लिए "दाय" शब्द है। "*मनु: पुत्रेभ्यो दायं व्यभजत्*" तै०सं० में 'दाय' सम्पत्ति के अर्थ में है और वैदिक साहित्य के "दायाद" का अर्थ उस व्यक्ति से है जिसका सम्पत्ति के कुछ भाग पर अधिकार हो। "दायभाग" पिता की सम्पत्ति में पुत्रों के भाग का उल्लेख करता है[2]। इसके अनुसार सैद्धान्तिक रूप से पुत्र ही एकमात्र पिता की सम्पत्ति का अधिकारी होता था किन्तु पुत्र के अभाव में पुत्री को, पैतृक सम्पत्ति का अधिकार प्राप्त था और पुत्र और पुत्री किसी के भी न होने से अर्थात् नि:संतान माता-पिता प्राय: अपने सम्पत्ति के अधिकारी बनाने के लिए पुत्र गोद लिया करते

उत्तराधिकारी

१—लेख नं० ४३७

२—पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र भाग ३ पृष्ठ ५४३

थे, और वैसे दत्तक पुत्र को हिन्दू-विधान ने सम्पत्ति के अधिकार को स्वीकृति दी। इसके अतिरिक्त परिस्थिति और समयानुकूल प्रायः इन सिद्धान्तों में उलट-फेर होते रहे।

चीनी तुर्किस्तान के समाज में भी संतान पैतृक सम्पत्ति के उत्तराधिकारी होते थे। लेख नं० १८७ के अनुसार "कुवय", मोगत, "चिमाल" और "लिमिन" ने अपने पिता और पितामह से उपजाऊ भूमि और अंगूर का खेत पाया[1]। संभवतः ये चार भाई होंगे, जिन्होंने पिता की सम्पत्ति पर अपने अधिकार का दावा किया होगा। लेख नं० २५६ और २६० वांशिक सम्पत्ति का उल्लेख करते हैं जिसका विभाजन बराबर-बराबर भागों में हुआ। सिर्फ पत्रय का भाग संयुक्त सम्पत्ति के अन्तर्गत रहा[2]। लेख के इन प्रसंगों से संयुक्त संपत्ति का उल्लेख मिलता है। संयुक्त परिवार की सम्पत्ति के विभाजन का अधिकार भारत के प्राचीन शास्त्रकारों ने भी दी है, किन्तु स्वतंत्र सम्पत्ति अविभाज्य थी। यदि पुत्र अपने पिता का अकेला संतान होता था तो पिता की मृत्यु के पश्चात् वह पिता की सम्पूर्ण सम्पत्ति का अधिकारी होता था, उसके साथ सम्पत्तिविभाग दायभाग का प्रश्न ही नहीं था किन्तु यदि पिता के एक से अधिक पुत्र हुए तो उन सबको पिता की सम्पत्ति पर एक-सा अधिकार था, तभी संयुक्त सम्पत्ति का एक साथ भोग करें अथवा उसका विभाग कर स्वतंत्र सम्पत्ति के अधिकारी हों, दोनों अधिकार उन्हें प्राप्त थे[3]।

१—लेख नं० १८७।

२—लेख नं० २९६—"किडति सुघ पत्रय चिलंठिन होद एद पत्रय अठ वर्षेषु स्तय पंचमस च कमवितंति यहि एद भुंद्र अत्र एज्ञवि प्रठ अत्र अनद पुछिदवो यथ एद पत्रय स्त्रय-पंचमस च कमविद्थए सिपंति"

३—पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र—पृष्ठ ५९३

खरोष्ठी लेख नं० १८७ और २५६ के उदाहरण से ज्ञात है कि चीनी तुर्किस्तान में भी सम्पत्ति के उत्तराधिकारी संतान होते थे। लेख नं० १८ के अनुसार "ल्पिमो," "पूगो" और "ओपगे" ने अपनी जो अब तक सामूहिक सम्पत्ति के रूप में थी सम्पत्तियों का विभाग किया[1]। चीनी तुर्किस्तान के परिवार में स्त्रियां भी स्वतंत्र सम्पत्ति की अधिकारिणी होती थीं। लेख नं०४७४ माता की स्वतंत्र सम्पत्ति का उल्लेख करता है। माता की सम्पत्ति पर भी पुत्रों का अधिकार था यह भी इस लेख से स्पष्ट है[2]। भारत में मनु और नारद ने भी स्त्रियों की सम्पत्ति में पुत्रों का भाग दायभाग बताया[3]।

चीन तुर्किस्तान में माता अथवा पिता की सम्पत्ति पर पुत्र और पुत्री का समान अधिकार था। *पुत्र थित्र सममग कर्तवो*[4] डा० बरो के अनुवाद के अनुसार पुत्र और पुत्री के बराबर-बराबर भाग संममग का उल्लेख है[5]।

इस प्रकार प्राचीन भारतीय परिवारों से मिलता जुलता चीन तुर्किस्तान का परिवार खानाबदोश या उजाड़ नहीं था बल्कि उनके परिवार सुव्यवस्थित और सुसंस्कृत भी कहे जा सकते हैं।

१—लेख नं० १८ "ल्पिमो युगो ओपगेस च सर्वभाग किडे अहोनो"

२—लेख नं० ४७४ "स्त्रियए न मुकेषि न लोतेय नितए यहि एत किलमुंत्र अत्र एशति स अनत प्रुछि वो यति जंनत्रियेन अनिति सियति यथ धमेन पुत्र धितर समभग कर्तवो यति मुकेषि लोते न स क्रितए सियति इश निचेय भविष्यति।

३—देखिए, चतुर्थ अध्याय में····
पी० वी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, भाग ३ पृष्ठ ५४५

४—लेख नं० ४७४

५—डा० बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ९२

अध्याय चतुर्थ

"स्त्रियों का स्थान"

खरोष्ठी लेख स्त्रियों के लिए विभिन्न शब्दों का उल्लेख करते हैं। हिन्दी भाषा में जिस प्रकार नारी के अवस्थानुसार और सामाजिक सम्बन्धानुसार महिला, स्त्री, कन्या, पुत्री, पत्नी आदि शब्द हैं, उसी प्रकार खरोष्ठी लेख में निम्नलिखित शब्दों के उल्लेख हैं :—

स्त्री अथवा स्त्रिय—[1] स्त्री जाति के लिए ही सामान्य अर्थ में प्रयुक्त किया गया शब्द है। अधिकांश लेखों में *स्त्रि* अथवा *स्त्रिय* शब्द है।

बरो ने *खर्वोनि स्त्रि* की समता डाइन अथवा जादूगरनी से किया। *खर्वोद* शब्द का अर्थ इनके अनुसार डाइन अथवा जादूगरनी है। अतः इसे यदि *खर्वोद* पढ़ें तो प्रसंग के उल्लेख में डाइन स्त्री उपयुक्त अर्थ देता है[3]। लेख नं० ५८ और ६३ के अनुसार कुछ लोगों ने *खर्वोनि स्त्री* की हत्या कर उससे

खर्वोनि स्त्री[2]

१—लेख नं० ३—"स च अहोनो इश सुगित विंआवेति यथ एष स्त्रि सुगीसए"। लेख नं० १९—"इश स्त्रि तमष्यनए" भगेन ""अन्य लेखों में भी है।

२—लेख नं० ५८, ६३, २४८। लेख नं० ५८ में "सियति संतिमोति खर्वोर्नि न सियति तेष जंनस सा स्त्रि तति""

३—बरो, वी० एस० ओ० एस० ७ पृष्ठ ७८०

बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८६

बदला लिया[१]। *खर्खोनि स्त्री* संभवतः मृत्यु दंड की भागी होती थी ।

वेशि संस्कृत के वेश्या के अर्थ में प्रयुक्त किया गया मालूम

वेशि स्त्री[२]— होता है। लेख नं० ७१९ के अनुसार दो व्यक्तियों ने एक वेशि स्त्री को अकारण ही भगा लिया और उसके साथ व्यभिचार भी किया[३]।

घितु और घिदरे[४]— इन दोनों शब्दों का व्यवहार कन्या के अर्थ में किया गया है[६]।

इस शब्द का उल्लेख विभिन्न लेखों में है[७]। संस्कृत में

१—लेख नं० ६३—"यथ अत्र खखोर्नि स्त्रि ३ निखलितंति तह सुध एदस स्त्रि मरिंतति अवशिठि···

२—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८६, संस्कृत के खाखेद, खर्कोट का अर्थ जादूगरनी है। अतः खर्खोन स्त्रि का अर्थ जादूगरनी से किया

३—लेख नं० ७१९—"गरहति यथ एदस अनहेतु वेशि स्त्रि चंतनोअए नंम सगपेय प्गो स च अछिंनंति अवि बलकरेन संवस गतंति एद करंन प्वि त्रे वर"।

४—श्री रतन चन्द्र अग्रवाल "पोजिशन आफ वीमेन एज डेपिक्टेड इन खरोष्ठी डाक्युमेंट, आई० एच० क्यू० १९५२ पृ०ष्ठ ३२७-४१

५—लेख नं० ३२—"पेत-अबनेंचि सगपेयस धितु चिंग ओपवे"··· लेख नं० ४६—धम करेंति स्त्रिय न कोनों घिदरे २ वसु'···

६—बरो, लैंग्वेज, ट्रेन्सलेशन ८६ पृष्ठ २७ और पृष्ठ ६७ वही ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ८, ११ धिसु और घिदरे का अनुवाद कन्या के अर्थ में है।

७—लेख नं० १५७—"एवं चस च यो महि इश भर्य गिलनि तुतहु प्रसदेन"···

भर्य— पत्नी के लिए भार्या शब्द ही है। अतः एफ० डब्ल्यू थामस और डा० बरो के अनुसार संस्कृत के *भार्या* से *भर्य* शब्द की उत्पत्ति हुई[१]।

लेख नं० २७९ और ६२१ के *अनिति* और *अनित* शब्द का अर्थ एफ० डब्लू० थामस ने भार्या अथवा

अनित और अनिति- पत्नी बताया। इन्होंने पाली के अनेति शब्द से इसकी तुलना की, जिसका व्यवहार पाली में बहुधा स्त्री के अर्थ में किया गया है[२]।

कुडि[३]— कुडी पुत्री के रूपमें प्रयुक्त है। पंजाबी भाषा में यह शब्द अविवाहित कन्या के लिए सर्वप्रचलित है।

लेख नं० ५२८ के महुलि शब्द की समता प्रसंग के अनुसार संस्कृत के *मातुलि* शब्द से किया गया[४]।

महुलि— *स्वसु*, *मतु*, और *दश्कि*—क्रमशः बहन, मां और दासी के लिए है।

अन्य प्राचीन पितृप्रधान समाज की भांति चीनी तुर्किस्तान के समाज में भी कन्या जन्म से अभिशापित समझी जाती

१— एफ० डब्लू० थामस, बी० एस० ओ० एस० भाग ६ पृष्ठ ६२१

२—एफ० डब्लू० थामस, बी० एस० ओ० एस० भाग-६ पृष्ठ ६२०, सुत निपात और दीघनिकाय के आधारपर। लेख नं० २७९— किल्मेचि प्गोनस भर्य अनिति हुअति...

३—लेख नं० ३३१ "परिदे कुडी उनितग प्रचे,.."

४—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८३ वही वही पृष्ठ १११

थी[1]। किन्तु पुत्र-जन्म परिवार के लिए आशीर्वाद और आनन्द का विषय था[2]। चीन में कन्या जन्म पर किसी प्रकार का आनन्द या खुशी नहीं मनायी जाती थी। ११ वीं शताब्दी के भारत के लिए भी कन्या दुख की मूल थीं[3]। पुत्र वंश परम्परा का द्योतक था, किन्तु कन्या जन्म से ही पराई सम्पति मानी जाती थी। यद्यपि कन्या पुत्र जन्म देकर समाज की मूल सहायक होती है, लेकिन पूर्वकालीन समाज ने कन्या को सदा भार-स्वरूप ही ग्रहण किया[4]।

कन्या—

विवाह के पहले तक चीनी तुर्किस्तान की कन्या पिता के शासन में रहती थीं। माता-पिता का पूर्ण अधिकार अपनी पुत्री पर था। वह उसे स्वेच्छा से बेच सकता था, या किसी अन्य व्यक्ति को उपहार, भेंट, दान या बंधक के रूप में देने का भी उसे अधिकार था।

चीनी तुर्किस्तान में कन्या के क्रय-विक्रय की परिपाटी राज्य विधान की दृष्टि से किसी प्रकार का दोष पूर्ण नहीं माना जाता था।

१—लेख नं० ३३१—"महरयपुत्र-कल-पुंञबलस किलेचि मनुश प्रियपत नम तस दि त वं व ते भुमंमि इचितंति निहंवनए कचनेन भुमदे"

२—लेख नं० ७०२—"पुत्र जात सर्वेहि षातेन भवितव्य"

३—ए० एस० अल्तेकर, "पोजिशन आफ वीमेन", पृष्ठ ७ "शोककन्दः क्व कन्या हि क्वानन्दः कायवान्सुत" कथासरितसागर—

४—लेख नं० ६६१—"कुडि तनुत्रि निखलिद एद कुडि प्गिसेन भष्ढस वंति परिवटिद भष्ट्रेन एद कुडिसुग्नुतस वंति विक्रिद"।

उदाहरणार्थ—

१—लेख नं० ५५१ के अनुसार एक कन्या सम्पत्ति के रूप में ली गई।

२—*दिष्टि*[1] ऊँचाई की एक कन्या, एक वर्ष ऊँट, जिसकी कीमत ४० *मुली*[2] के बराबर थी बेची गई[3]।

३—पाँच तिठि लम्बी कन्या ४५ *मुली* के मूल्य पर स्वीकार की गयी[4]।

४—लेख नं० ५९२ के उल्लेखानुसार ४ दिष्टि ऊँची एक कन्या ४० मु*ली* के एक ऊँट और एक खोतानी लोई अथवा कम्बल के दाम पर बेची गई।

इस बिक्री के पश्चात् कन्या पूर्ण रूप से ग्राहक की सम्पत्ति मानी जाती थी[5]। कन्या के पिता, भाई अथवा उसके किसी भी सम्बन्धी का कन्या पर कोई अधिकार नहीं रह जाता था। ग्राहक उस कन्या के साथ चाहे जैसा भी व्यवहार करे, कन्या

१—बरो, लैंग्वेज, ९८
दिष्टि-एक प्रकार का माप था।

२—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ १११-मुली का सामान्य अर्थ मूल्य से लिया गया। साथ ही मुली मूल्य के किसी विशेष मात्रा का संकेत है। कन्या के क्रय-विक्रय में बहुवामुली का उल्लेख है।

३—लेख नं० ५८९—"ति कुडि स्मित्सए नम विक्रित तित मुली उट १ एकवर्षग चपरिश मुलियेन...."

४—लेख नं० ४३७—"ताय कुडियए पंच चपरिश मुलियमि गंनंन अवि स मे किर्तति"

५—लेख नं० ५९१—"कुडि तनुत्रि निखलिद एद कुडि प्पिसेन भण्डस वंति..."

के पिता या भाई को इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की आपत्ति प्रकट करने का अधिकार नहीं था[1]। ग्राहक उस कन्या का प्रमाणित अधिकारी था[2]। लेख नं० ४३७ के अनुसार चंकुर ने कन्या की बिक्री की स्वतंत्रता दी, अतः अब वह "मष्ठिगे" की सम्पत्ति हुई। चंकुर राज्य के न्याय विभाग के अधिकारियों में एक था[3]। अतः कन्या की बिक्री राज्य-विधान की ओर से स्वीकृत था।

इन उल्लेखों से ऐसा ही मालूम होता है मानों कन्या की अपनी इच्छा अथवा अनिच्छा का समाज में कोई महत्व नहीं था। समाज के लिए वह निर्जीव सम्पत्ति के रूप में एक निधि स्वरूप मानी जाती थी। कन्या के क्रय-विक्रय, दान-प्रतिदान, अथवा लेन देन में न तो राज्य के कानून को और न ही समाज को किसा प्रकार की आपत्ति थी। लेख के विवरण कन्या को एक चल सम्पत्ति के रूप में दिखाते हैं। लेख नं० ५५१ एक कन्या का हाथो हाथ बेचे जाने का उल्लेख करता है, जो एक के बाद दूसरे, दूसरे से तीसरे और तीसरे से चौथे व्यक्ति के हाथ बेची गई[4]।

१—लेख नं० ४३७—"ऐश्वर्य कुछ सर्व वोग किकम करंनि सियति..."

२—लेख नं० ५८०—

३—बरो, लैंग्वज, पृष्ठ ८८,
एफ० थामस, अक्टा ओ० १२ पृष्ठ ६८

४—लेख नं० ५५१—"कुडि तनुत्रि निखलिद एद कुडि प्गिसेन भष्ढस वंति परिवटिद भष्टेन एद कुडि-सुग्नुतस वंति विक्रिद प्गिसभष्ढ स च समोवद किडंति भष्ड मंत्रेति एद कुडि अहु न विक्रिद"।

"*ओगु लिपेय कुडी दित अहु तिदेमि संघश नस्ति वचन*" लेख नं० ११४ की प्रस्तुत पंक्ति किसी व्यक्ति को कन्या देने का संकेत करती है। यह लेख सम्पूर्ण नहीं है और लेख के शब्द भी स्पष्ट नही है, अतः उक्त कन्या क्यों दी गई यह अज्ञात है। संभवतः यहाँ पर बंधक के रूप में कन्या को दिया गया।

कन्या बंधक के रूप में

लेख नं० ३८० के अनुसार सोंजश्रए नाम की कन्या, जिसे उपहार में दिया गया, सुरक्षित रूप से रखे जाने का विवरण है[1]। संभवतः उपहार स्वरूप दी हुई कन्या का स्थान साधारण स्तर से कुछ श्रेष्ठ था। क्योंकि ऐसी कन्याओं के प्रति विशेष ध्यान दिए जाने का संकेत है। यों सामान्य दृष्टि से भी उपहार की वस्तु सदा स्नेह की प्रतीक होती है।

ऋण और उपहार के रूप में

कन्या गोद लेने अथवा देने की परिपाटी लेखों के विभिन्न उद्धरणों से स्पष्ट है[2]। गोद ली हुई कन्या को साधारण कन्या की अपेक्षा समाज की ओर से अधिक सुविधाएँ प्राप्त थीं। ऐसी कन्याएँ समाज की विशेष उदारता और सहानुभूति की पात्र समझी जाती थीं। *स कुडी कथनस न विक्रिनदवो न ववोधावदवो नेनि गोठदे दुर निखलदवो नेवि गोठमि उपेड कर्तवो*, यथा

गोद लेने की प्रथा

१—लेख नं० ३८० "इतं च लिखितग कुडिय संजश्नरए लषी ति तग प्रचेय अनथ धरिदव्य।

२—लेख नं० ३९, ४९, ३३१, ५४२, ७६९, ७७१
लेख नं० ७६९ और ७७१ बरो द्वारा प्रकाशित अनुवाद है।
बी० एस० ओ० एस० के नवें भाग में है।

तनु दित संन जनिदवो[१]। लेख के अनुसार गोद ली हुई कन्या को न बेचने, का न बंधक के रूप में किसी व्यक्ति को देने का और नहीं घर से निकालने का किसी को अधिकार था। कन्या के प्रति किसी प्रकार का दुर्व्यवहार करने की मनाही थी। भारत के प्राचीन ग्रंथ *व्यवहार मयूख* के अनुसार सिर्फ पुत्र ही गोद लिए जा सकते थे[२]। कन्या गोद लिए जाने के योग्य नही थीं, किन्तु *स्कन्द पुराण, लिंग पुराण, हरिवंश, आदिपर्व, रामायण* आदि भारतीय ग्रन्थ कन्या के गोद लिए जाने का वर्णन करते हैं[३]।

कन्या अथवा बालक किसी भी शिशु के गोद लेने में गोद लेने वाले व्यक्ति को शिशु के अपने पिता को दूध का दाम मूल्य के रूप में देना होता था। यह यहां की आवश्यक प्रथा थी, जिसका उल्लेख खरोष्ठि लेखों में "*कुठछिर*" शब्द से किया गया है। लेख नं० ३९ में ल्यिपेय ने राजा को सूचित किया कि उसकी दासी ने अपनी कन्या को गोद दिया, किन्तु कन्या का *कुठछिर* नहीं दिया गया[४]। लेख नं० ४५ के अनुसार कन्या का *कुठछिर* एक तिर्ष अश्व दिया गया, और यह फैसला न्यायालय

१—लेख नं० ३३१

२—पी० बी० काने, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, पृष्ठ ६७४ "दत्तकश्च पुत्रानेव भवति न कन्या"। व्यवहार मयूख

३—वही, पृष्ठ ६७४-६९९, गोद लेने के विभिन्न सिद्धान्तों का उल्लेख है।

४—लेख नं० ३९ "स उनिति तेष वंति उनिद वर्धिद कुठछिरस एदेष न दित यहि एद किलसुद्र अत्र एषति प्रठ अत्र समुह अनद प्रोछिदवो भूदर्थं एदेष दशि कप्गेय दश्नन उनिति दिति एदेष अन अप्रोछिति सियति कुठछिरस न दितय सियंति"।

में हुआ[१]। डा० बरो ने *कुठछिर* का अनुवाद अंग्रेजी में *मिल्क-फी* किया है, जो शिशु के पिता को दिया जाता था। बच्चे के शैशवावस्था में बच्चे के खाने-पीने में जो व्यय होता था, संभवतः उसके प्रतिदान में गोद लेने वाला व्यक्ति शिशु के पिता को, मूल्य स्वरूप देता था, उसे *कुठछिर* कहा जाता था[२]।

कुठछिर में प्रायः अश्व या ऊंट देने की प्रथा थी, ऐसा लेखों से अनुमान होता है[३]।

साधारणतः पूर्वकालीन सभी पितृ प्रधान समाज में कन्या का पैतृक अधिकार निरर्थक विषय समझदा जाता था। पुत्र पिता का वांशिक अधिकारी था, किन्तु कन्या का यह अधिकार कुछ विशेष परिस्थितियों पर निर्भर करता था।

पैतृक सम्पत्ति पर कन्या का अधिकार

खरोष्ठी लेखों से ज्ञात है कि चीनी तुर्किस्तान में पुत्र की ही भांति पुत्री भी पैतृक सम्पत्ति की अधिकारिणी होती थीं। पुत्र और पुत्री दोनों ही सम्पत्ति के समान भाग के अधिकारी थे। किन्तु राज्यविधि नियमों के अनुसार वैसे संतान ही पैतृक सम्पत्ति के अधिकारी होते थे, जिनके माता-पिता का विवाह विधिपूर्वक हुआ हो, अर्थात् जिनका *लोते* लोदे और *मुकेषी* दिया गया हो। लेख नं० ४७४ में सुवेठ मिमसेन द्वारा यह मालूम हुआ कि यणु की बहन जो यव-अवन प्रदेश

१—लेख नं० ४९ "यथ एदस दक्षि चिमिकए धितु स्त्रयस उनिति गिटए इश रयद्ररंमि कुठछिरस तिर्ष अन्स व्योछिंनिदग"…

२—डा० बरोः लैंग्वेज, पृष्ठ ८३ एफ० डब्लू० थामस, श्रेक्टा ओ० १२ पृष्ठ ३७ कुठछिर का अर्थ संदेह जनक है।

३—लेख नं० ४९, ५६९

किल्मेचि[1] की रहने वाली थी, श्रमंण संगपाल के साथ व्याही गई, जो चनिस देवि-अवन प्रदेश किल्मेचि का निवासी था। किन्तु विवाह में वधुशुल्क अर्थात् न *लोते* और *मुकेषी* दिया गया[2]। अतः इस सूचना को पाकर राज्य के अधिकारियों ने स्थिति की सत्यता समझने की आज्ञा दी और यह भी कहा कि यदि बधु का विवाह शास्त्रीय विधि से हुआ हो तो वांशिक सम्पत्ति को बराबर-बराबर भाग उसके पुत्र और पुत्री को मिलेगा और यदि *लोते* या *मुकेषी* विवाह में नहीं दिया गया हो तो पुनः शासन अधिकारियों को सूचित करें[3]।

इस लेख से यह स्पष्ट है कि समाज में विवाह की एक सर्व प्रचलित रीति थी, जिसके विशेष नियमों का पालन आवश्यक था। दूसरी बात है कि सम्पत्ति का विभाजन कोई मन मानी नहीं कर सकता था। राज्य के कानून के

१—बरो, लैंग्वेज पृष्ठ ८३ "यव अवनूमि किल्मे-चि" का अनुवाद यव-अवन का रहने वाला किया। प्रो० थामस ने अेक्टा ओ० १३ पृष्ठ "किल्मे" का अर्थ असामी, या रियासत बताया।

२—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ११९ "लोते" और "मुकेषी" का अनुवाद बधुशुल्क (bride-price) किया।
लेख नं० ५८९ के अतिरिक्त अन्य स्थलों पर "लोते" और "मुकेषी" वधुशुल्क के अर्थ में प्रयुक्त हैं।

३—लेख नं० ४७४ "महनुअव महरय लिहति षोठंग ल्पिपेयस मंत्र देति अहुनो इश सुवेठ भीमसेन विंञाति करेति यथ यवे अवनेंचि किल्मेचि यप्गुअस श्वसु चतिस देवि अवनेंचि किल्मेचि श्रमंन संगपलस भर्य तय स्त्रियए न मुकेषि न लोतेय नितए यहि एत किलमुंत्र अत्र एशति स अनत प्रुछि····वो यति जंञात्रियेन अनिति सियति यथ धमेन पुत्र धितर समभग कर्तवो यति मुकेषि लोते न स क्रितए सियति इश निचेय भविष्यति

अनुसार ही कोई कुछ कर सकता था। तीसरा निष्कर्ष यह जान पड़ता है कि पुत्री, पुत्र की ही भाँति सम्पत्ति की अधिकारिणी होती थी। दोनों का भाग बराबर-बराबर समभाग था। माता की सम्पत्ति का विभाजन माता की मृत्यु के पश्चात् अथवा पहले हुआ, यह स्पष्ट नहीं है। माता की मृत्यु के पश्चात् ही प्रायः बच्चों के लालन-पालन के हेतु सम्पत्ति का विभाजन हुआ हो ऐसी संभावना की जा सकती है। ऋगवेद कालीन भारतीय कन्या पिता की अकेली सन्तान होने पर पिता की सम्पत्ति की अधिकारिणी होती थी। किन्तु विशेष स्थितियों में कन्या को भी सम्पत्ति का अधिकार दिए जाने का उल्लेख है[1]।

एफ० डब्लू० थामस ने खरोष्ठी लेख नं० ४७४ में उल्लिखित जांत्रियेन शब्द का अर्थ पिता द्वारा कन्यादान बताया[2]। कन्यादान शास्त्रीय विवाह की प्रमाणित विधि थी। थामस ने

विवाह

पुनः लेख नं० ५५५ का उदाहरण देते हुए इस बात की पुष्टि की कि पिता द्वारा कन्या देने की प्रथा समाज में सर्वमान्य और सर्वप्रचलित थी[3]। चीनी तुर्किस्तान के विवाह की यह रीति भारत के प्राचीन वैवाहिक प्रथा से मिलती है। यद्यपि प्राचीन भारत के आठ प्रकार के विवाह का उल्लेख चीनी तुर्किस्तान के समाज

१—ए० एस० अलतेकर—पोजिशन आफ वीमेन—पृ० २९२।

२—एफ० डब्लू० थामस, बी० एस० ओ० एस० भाग ६ पृष्ठ ९१९ से ९२१ तक लेख नं० ४७४ वो यति जंञत्रियेन अनिति सियति यथ धमेन जांत्रियेन कन्यादान।

३—लेख नं० ५५५—"अथव जंञत्रेन अनिदे सिथंति तेन विधनेन यथ धमेन प्रुछिदवो अत्र न परिभुजिशतु।

एफ० डब्लू० थामस, बी० एस० ओ० एस० भाग ६ पृष्ठ ९२१।

में उसी रूप में नहीं था। खरोष्ठी लेखों में विवाह का जैसा उदाहरण मिलता है उसकी समता भारत के आसुर विवाह की कुछ रीति से की जा सकती है। आसुर विबाह में वर समुचित वधु शुल्क देकर वधु को प्राप्त करता है[1]। लेखों से यह स्पष्ट है कि चीनी तुर्किस्तान के समाज में भी पिता कन्यादान के प्रतिदान में वर से कुछ धन पाने की आशा रखता था। लेख एक ऐसे लोभी पिता का उल्लेख करता है, जिन्होंने वर से कन्या का मूल्य पाने की आशा ही नहीं वरन् अधीर होकर वर दमाद को लिखा कि अन्य सम्बन्धियों ने तो उपहार पाया, लेकिन हमलोगों को कुछ नहीं मिला[2]। वधु शुल्क के रूप में यह धन लेख के *लोते* और *मुकेषी* शब्द से स्पष्ट होता है। लेख नं० ४७४ में ही सतर्कता से कहा गया कि यदि उक्त स्त्री का विवाह शास्त्रीय रीति से न हुआ हो तो उसके बच्चे अपनी वांशिक सम्पत्ति के अधिकारी नहीं हो सकते। अतः उस स्त्री के विवाह में *लोते* और *मुकेषी* दी गई अथवा नहीं इसकी खोज करे[3]। *लोते* और *मुकेषौ* शास्त्रीय अथवा विधिपूर्वक विवाह का आवश्यक अंग था। लेख नं० २७९ के उल्लेखानुसार यव-अवन स्थानीय नाम की कन्या अजीयम-अवन स्थानीय नाम में व्याही गई, किन्तु वधू का *लोते* और *मुकेषी* नहीं चुकाया

१—ए० एस० अलतेकर, पोजिशन आफ वीमेन, पृष्ठ ४६।

२—लेख नं० ६९०—षयित अस्मकं परिदे उप्छ हुत अंनेष न परिंदे श्रुतम तमहु परिंदे....लेख के शब्द स्पष्ट है।

३—लेख नं० ४७४—स्त्रियए न मुकेषि न लोतेय नितये यहि एत कीलमुंत्र अत्र एशति स अनत प्रुछि'''वो यति जंनत्रियेन अनिति सियति यथ धमेन।

गया[1]। थामस ने *लोते* और *मुकेषी* शब्दों की विवेचना करते हुए खरोष्ठी लेखों के आधार पर तीन प्रकार के विवाह की ओर संकेत किया। १—पिता के द्वारा कन्यादान देकर २—अपनी स्वेच्छा से कन्या स्वयं 'वर' चुन ले, और ३—*मुकेषी* के द्वारा जो *लोते* से कन्या की खरीद क्रीत करना है[2]।

साधारणतः पिता अपनी इच्छा से पुत्री का विवाह करता था। इस प्रकार के विवाह में पिता को *लोते*, और *मुकेषी* बधु-शुल्क रूप में मिलता था।

लेख नं० ६२१ के उदाहरण से ज्ञात होता है कि वयस्क कन्या स्वेच्छा से विवाह कर लेती थी। स्वेच्छा से यदि कोई वयस्क स्त्री विवाह कर ले तो संभवतः पिता को वर से लोते लेने का कोई अधिकार नहीं था, ऐसा संकेत अस्पष्ट रूप से लेख के प्रसंग से ज्ञात होता है[3]। किन्तु इसे राज्य विधान का नियम कहना ठीक नहीं मालूम होता क्योंकि अन्य लेखों से ऐसा कोई उल्लेख प्राप्त नहीं है।

१—लेख नं० २७९—सुवर्ण मसुग विंजवेति यथ यवे अवनंमि किलमेचि कल अचुञियस इवसु चकुवअए नम अजियम अवनंमि किलमेचि गोनस भर्य अनिति हुअति तय स्त्रियए यवे अवनंमि लोते-षिन निदय तत्र तय पुत्र धिदर जतंति''...

२—एफ० डब्लू० थामस, बी० एस० ओ० एस० भाग ६ पृष्ठ ५२९।

३—लेख नं० ६२१—"मुषय प्रसवित यवे अवनंमि हुद अहुनो श्रमन सुंदर लिपपन स च स्त्रि सुप्रियए प्रचे विहेट करेंति लोदे प्रुछंति यहि एद किलमुंत्र अत्र एशति अठ अनद प्रुछिदव्य यदि भुदर्थ श्रमन सुंदर लिपपन स च सुप्रियए प्रचे लोदे प्रचे एदस सगमोवियस विहेट करमन, सियति एदे वरिदव्य सुप्रियए प्रचे सगमोबियस वंति असंन न गंदव्य"।

मुकेषी का अर्थ थामस ने उन व्यक्तियों के पद से किया, जो पिता को ही भाँति कोई अन्य व्यक्ति कन्या का विवाह लेते लेकर करता हो। "*यति एदे स्त्रिय न मुकेषिन दितग स्यति*", का अनुवाद थामस ने किया। "यदि वह स्त्री मुकेषी के द्वारा नहीं दी गई हो।" अतः थामस के अनुसार मुकेषि यहाँ उस व्यक्ति के लिए प्रयुक्त है, जिसके द्वारा स्त्री दी जाती थी[1]।

बधुशुल्क देने की प्रथा प्राचीन चीन और असिरिया में भी प्रचलित थी। किन्तु हिन्दू शास्त्रकारों ने बधुशुल्क का विरोध किया है। बौधायन ने उन अभिभावकों को सचेत किया है जो विवाह में इस प्रकार कन्या की बिक्री करते हों[2]।

चीनी तुर्किस्तान के समाज में विवाह जाति-बंधन से सीमित नहीं मालूम होता। सजातीय और अन्तर्जातीय दोनों प्रकार के विवाह के उदाहरण मिलते हैं, जैसे एक भिक्षु ने किसी अन्य भिक्षु को अपनी कन्या विवाह में दी। यह विवाह राज्य विधान की ओर से स्वीकृत थी[3]। पुनः लेख नं० ६२१ के अनुसार चटो नाम के एक व्यक्ति ने भिक्षु सुन्दर की कन्या से विवाह किया। चटो कुम्हार कुलल का पुत्र था, किन्तु उसने

१—एफ० डब्लू० थामस, बी० एस० ओ० एस० भाग ६ पृष्ठ ६२२

२—ए० एस० अल्तेकर, पोजिशन आफ वीमेन, पृष्ठ ४८-४९ क्रीता द्रव्येण या नारी सा न पत्नी विधीयते बोधायन क्रय क्रीता च या कन्या न सा पत्नी विधीयते। तस्यां जाताः सुतास्तेषां पितृपिण्डो विधते', पद्मपुराण

३—लेख नं० ४१८—शरिपुत्रेन स भ्रितु शिर्सतेयए श्रमंन बुधवमस जवटवेन भर्य दित तय स्त्रिवए शिर्सतियए धितु पुंञवतियए नम श्रमंन जिवलो अठमस भर्य दिदि"...।

भिक्षु की कन्या के साथ विवाह किया[१]। जाति और गोत्र का जैसा व्यवहार प्राचीन भारतीयों का था वैसा कोई बंधन चीनी तुर्किस्तान के समाज में नहीं था[२]।

समाज में निकट सम्बन्धियों के साथ विवाह-सम्बन्ध का उदाहरण लेखों से प्राप्त है। लेख नं० ३२ के अनुसार सागपेय ने चिंग के साथ अपनी कन्या का विवाह किया। इस विवाह के प्रतिदान में चिंग ने अपनी बहन को श्वसुर "सागपेय" के लिए देने की इच्छा प्रकट की[३]। यद्यपि हिन्दू संस्कार के अनुसार इस प्रकार का संबंध निषेध है किन्तु मध्यएशिया के हूण इस विवाह का विरोध नहीं करते। ई० पू० पहली शताब्दी में हूण के एक प्रधान ने कांग-गू नाम के राजा की कन्या से विवाह किया, फलस्वरूप उस प्रधान ने अपनी ही पुत्री को श्वसुर कांग-गू के विवाह के लिए दिया[४]।

पत्नी के प्रतिदान में कन्या देने की नई प्रथा खरोष्ठी लेख से मालूम होती है। लेख नं० २७९ के अनुसार यव अवन स्थानीय नाम की कन्या अजीयम-अवन स्थानीय नाम में व्याही गई। इसके प्रतिदान में अजीयम-अवन से यव-अवन के लिए

१—लेख नं० ६२१—

२—चीनी तुर्किस्तान के समाज में जाति-विभाजन का भारतीय स्वरूप का उल्लेख नहीं है। अतः श्रेणी अथवा वर्ग, व्यवसाय की दृष्टि से की गई थी, ऐसा अनुमान खरोष्ठी लेख के उदाहरण से होता है।

३—लेख नं ३२—"सगपेयस धितु चिंग ओपवे पेत—अवन किल्मेयंमि अनिद तय लोदे स्वशु चिंग सगपेयस इछिद।

४—मकगर्वन, अर्ली इम्पायर आफ सेन्ट्रल एशिया, १९३९ पृष्ठ १९०

एक कन्या देनी हुई[1]। वरो ने कहा कि यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो कन्यादान की यह प्रथा एक दूसरे परिवार से नहीं थी वरन् अवन नगर से ही था। संभवतः यह आवश्यक था कि विवाह के लिए एक कन्या यव-अवन से अजीयम अवन को जाए तो उसके प्रतिदान में अजीयम-अवन की कन्या यव-अवन को जाए[2]।

लेख नं० ३४ के प्रसंग के आधार पर बरो ने विवाह-विच्छेद की प्रथा का संकेत किया। इस लेख के कई शब्द नष्ट हो चुके हैं। फलतः भाषा का क्रम टूट जाने से वाक्य विवेचना कठिन है, किन्तु लेख में उद्धृत शब्द *विवेग* विवाह-विच्छेद के अर्थ में व्यवहार किया गया मालूम होता है।[3] इनके अनुसार *विवेग* शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के *विवेग* विच् धातु से हुई, जिसका अर्थ जुदा होगा, विभाग करता है। अतः विवेग तलाक की प्रथा का संकेत करता है[4]। लेख से यह अनुमान होता है कि पति-पत्नी दोनों एक बार तलाक देकर पुनः साथ हो गये और इसके पश्चात् फिर

विवाह-विच्छेद

१—लेख नं० २७९—"सुवर्न मसुग विंजवेति यथ यवे अवनंमि किल्मेचि कल अचुञियस श्वसु चकुवअए नम अजियम अवंनंमि किल्मेचि प्रोनस भर्य अनिति हुअति तए स्त्रियए यवअवनंमि"
लेख नं० ४८१—में पुनः इसकी पुनरावृत्ति हुई है।

२—वरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ११६।

३—लेख नं० ३४—"क्रे य-चमश्रिएस च परोस्परेन सध' ' 'संति स क्रितएन शंसि पुनु विवेग कर्तवो इत्यर्थ यहि अत्र दिदवो

४—टी० बरो—लैंग्वेज, पृष्ठ ११६

से एक दूसरे को तलाक दिया[1]। पति-पत्नी के परस्पर स्वीकृति से तलाक देने की प्रथा भारत के अतिरिक्त चीन में भी प्रचलित थी। पत्नी के रूप में स्त्री के अधिकार और कर्तव्य का स्पष्ट विवरण नहीं ज्ञात है। लेख नं० ६२१ एक ऐसे पति का उल्लेख करता है जिसने पत्नी, बच्चे और दास के होते हुए भी किसी अन्य स्त्री को प्यार किया और समयानुसार उसे भगा कर कूची प्रदेश में शरण ली[2]। लेख नं० ६३२ में भी इस प्रकार पति-पत्नी के भाग जाने का उल्लेख है। पति-पत्नी दोनों की सम्पति से तलाक की प्रथा भारत में और चीन में "फिउडल" काल तक थी। चीनी तुर्किस्तान में भी जैसा कि देखा गया युवक और युवतियाँ दोनों को तलाक और पुनर्विवाह की अनुमति प्राप्त थी[1]।

समाज में स्थान

साधारण रूप से स्त्रियों का स्थान दयनीय था। सम्पत्ति के रूप में क्रय विक्रय और लेन-देन की परिपाटी उनके अस्तित्व की समता पशु और गतिशील वस्तुओं से करती है। कन्या का मोल भाव, ऊँट, वस्त्र, सिल्क के थान आदि के मूल्य पर होता था। स्त्रियों के प्रति समाज की ऐसी तुच्छ धारणा अन्य समकालीन समाजों के भी उल्लेखनीय है। एथेन्स की स्त्रियाँ सब्बी तुल्य समझी जाती

१—लेख नं० ३४—"तुस्महु एष कुडि इश अवकश भविष्यति अवि च-तय इश महि सर्व निचे क्रित न भुवि तुस्महु अत्र यि"

२—लेख नं० ६२१—"गरहति यथ एष यबे अवनंमि किल्मेचि कुलल चंस नम तस पुत्र एष सगमोवि ओगु अशोग नि किल्मेचि "श्रमन सुन्दरस धितु सुप्रिय नम भर्य अनित चंवत्रेन तदे पचे एष सगमोवि सुप्रियए च चतोस गोठदे कुचि रजंमि पलयितंति चिर कलंमि कुचि रजंमि असितंति"।

थीं[1]। सोवियत रूस की स्त्रियों के लिए यह कहावत थी कि स्त्रियाँ और गदहे दोनों ही पीटे जाने के तुल्य हैं[2]। फारस में स्त्री और बच्चे को कर में देने का उल्लेख है। भारत के बहुत प्राचीन समय में भी स्त्रियाँ चल-सम्पत्ति समझी जाती थीं।

चीनी तुर्किस्तान के खरोष्ठी लेख एक बड़े ही हास्यपद कहावत का उल्लेख करते हैं कि स्त्रियाँ चाकू की तेज धार की भाँति तीक्ष्ण होती है। अतः स्त्रियों द्वारा प्रशंसनीय व्यक्ति का कुछ मूल्य नहीं समझना चाहिए[3]। समाज में स्त्रियों की सहमति का कोई मूल्य नहीं था।

स्त्रियां निर्दयतापूर्वक पीटी जाती थीं। अधिक मार पड़ने पड़ने के कारण कई घायल हो जाती थीं। स्त्रियों के सिर फोड़े जाने का उल्लेख विभिन्न लेखों में है। लेख नं० ९ एक ऐसी स्त्री का विवरण देता है, जो किसी व्यक्ति द्वारा भगा ली गई, बाद में उस व्यक्ति ने स्त्री को इतना पीटा कि वह बुरी तरह घायल हो गई। गर्भविनठ यहां तक कि गर्भपात हो गया और

१—श्री रतन चन्द्र अग्रवाल—पोजिशन आफ वीमेन एज डेपिक्टेड इन खरोष्ठी डाक्यूमेंन्ट, आई० एच० क्यू०, १९५३ पृष्ठ ३३३

२—ए० एस अलतेकर—पोजिशन आफ वीमेन, पृष्ठ--४०७ में डेविस् ए शार्ट हिस्ट्री आफ वीमेन पृष्ठ १७२ के कथन का उल्लेख है।

३—ए० एस अलतेकर—पोजिशन आफ वीमेन पृष्ठ ११२

४—लेख नं० ५१४—"इस्त्रियनं प्रियु व अस्ति मा प्रियु तिन विदयति कुर घर सं मे इस्त्रिए तष वर्न को भवति यत्र कगु मवे विक्रम् शदविदव्य व्रमंन न ह स्य विधय व हसंति"

५—लेख नं० ५३—

तब अन्त में उसे उसके पति के पास भेज दिया गया[1]। भारत में स्मृति और पुराण ने भी ऐसी असहाय औरतों को समाज में ग्रहण करने की उदारता दिखाई है। खरोष्ठी लेख बलपूर्वक स्त्रियों के साथ व्यभिचार किए जाने का भी उल्लेख करते हैं[2]।

स्त्रियां न्यायालय में साक्षी के रूप में जाती थीं। लेख नं० ४२० के अनुसार भाई की मृत्यु के पश्चात् बहन ही भाई के ऋण आदि के समझौते के लिए न्यायालय में गई। न्यायालय में कई साक्षी नियुक्त किए गए, जिसमें सेवत्रयए नाम की एक स्त्री भी साक्षी थी। पुनः लेख नं० ५६९ में भी न्यायालय के साक्षियों गवाहों में चगु नाम की एक कन्या का उल्लेख है।

न्यायालय में स्त्रियां—

खरोष्ठी लेख ऐसी स्त्रियों का उल्लेख करते हैं जो चीनी तुर्किस्तान के समाज में जीवनोपार्जन के हेतु परिश्रम किया करती थीं। पशुशाला में पशुओं की देख-भाल के लिए स्त्रियों की नियुक्ति का उल्लेख लेख नं० १६ से मिलता है। लेख के अनुसार इस कार्य के लिए पारिश्रमिक के रूप में भोजन, वस्त्र और पैसे उसे मिले[3]। किन्तु स्त्रियों को अकारण ही कार्य करने के

पारिश्रमिक—

१—लेख नं० ९—"एदस स्त्री चदी पर्सु अलपेय रश्वरस व अगसितन्ति तडितंति यो गर्भविनठ त्रिति दिवस पतम ओडितंति"

२—लेख नं० ७१९—"गरहति यथ एदस अनहेतु वेसि स्त्रि चंतंनोअए नंम सगपेय णो स च अछिंनंति अवि बलकरेन स्रंवस गतंति···

३—लेख नं० १९—"इश स्त्री तभष्यनये भगेन यितसेनस खुलन···यथ पूर्व राजधमेन चोडग पचे वर परिकरय ददवो····"

लिए प्रेरित नहीं किया जाता था। उनकी शारीरिक योग्यता के अनुसार ही उन्हें उनके उपयुक्त कार्य सौंपा जाता था।

लेख नं० ३९ दासी स्त्री का उल्लेख करते हुए बताता है कि

दासी— दासी ने अपने स्वामी की आज्ञा के बिना ही अपने बच्चे को गोद दिया[२]।

मध्यएशिया की स्त्रियों की स्थिति को देखते हुए सहज ही समकालीन देशों में भारत, चीन, रोम आदि पड़ोसी देशों की सामाजिक स्त्रियों का ध्यान आ जाता है।

सामान्य दृष्टिकोण— वास्तव में संस्कृति और सभ्यता का बीज इन प्रदेशों ने ही मध्यएशियाई प्रदेशों को दिया। शुंग-युन का खोतान विवरण स्त्रियों के पुरुषों की भांति ऊंट और घोड़े की सवारी करने का उल्लेख करते हैं[३]।

२—लेख नं० ३९—"एदेष घ्झि चिमिकये नाम एदष अन अपरोछिति घितु कणेयस दझन उनिति""

३—ए० स्टाईन, एंशियंट खोतान, पृष्ठ १७०

अध्याय पंचम

व्यवसाय

प्राचीन व्यवसायों में कृषि और पशुपालन का मुख्य स्थान है, जिसका प्रचलन एशिया में विशेषरूप से था। भारत के ऋग्वेदकालीन समाज के जीवन का आधार कृषि और पशुपालन ही था। वेदोत्तर-कालीन समाज में भी कृषि की महत्ता का उल्लेख है।

खरोष्ठी लेख चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों में भी कृषि की प्रधानता दिखाते हैं। पशु समाज की सम्पत्ति थी और कृषि उनकी आय का मुख्य साधन था। कृषक, भूमि-भेद, खेती की विधि, और बीजों की परख में, प्रवीण थे।

कृषि

भूमि-भेद का उल्लेख लेख के मिशि और अक्रि शब्द से होता है। प्रोफेसर थामस ने लेख नं० ५८२ में उल्लिखित पंक्ति "*मिशिय भूम हुअति, तदे परु एश भूम अक्रि पतिद*" का अनुवाद कर बताया कि लेख के अनुसार सर्व प्रथम यह *मिशि* भूमि थी पश्चात् में यह *अक्रि* भूमि हुई। अतः इस आधार पर *मिशि* का अर्थ जोती हुई भूमि और अक्रि का अर्थ बिना जोती हुई भूमि बताया[1]।

१—प्रो० थामस, अक्टा ओ० भाग १३, पृष्ठ ३८,
बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ १११

हल से जोती जाने वाली धरती भूमिक्षेत्र कहलाती थी[1]। भारतीय कृषक भी ऐसी धरती के लिए उर्वरा या क्षेत्र शब्द का प्रयोग करते थे, और हैं। खेती की जुताई का साधन क्या था इसका उल्लेखन नहीं मिलता है किन्तु लेखों से स्पष्ट है कि कृषकों में भी कुछ जुताई और बुआई के कार्य में विशेष दक्ष थे[2]। लेख नं० ४८९ के ल्लेख हैं—"उपजाऊ भूमि किसी को जोतने-बोने के लिए नहीं दी गई, किन्तु लिपये" से मैंने भूमि का शुल्क वक पाया। अतः इस भूमि की जोताई अब लिपये के अधिकार में है[3]। लिपये ने वस्तुतः भूमि की खरीद नहीं की वरन् शुल्क के रूप में कुछ देकर भूमि की जोताई का भार लिया। संभवतः फसल के लाभ की दृष्टि से लिपय ने भूमि की जोताई, अधबटैया अथवा साझी के रूप में किया। ऐसा अनुमान होता है। जुताई और बुआई के लिए खरोष्ठी लेख *कृषितग* और *ववितग* का उल्लेख करते हैं[4]। संस्कृत में

१—लेख नं० ४८९ "भूतार्थ महि अत्र भूमक्षेत्र न कस्य····तह भूमक्षेत्र' देखिए, ब
बरो, वी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ७८०

२—लेख नं० ६७८ "भूम कुरोर त्रे मिलिमि प्रभन" और
लेख नं० ५७४ "यथ पूरविग कुरोर हुअति" में उल्लिखित "कुरोर" का अर्थ उस क्षेत्र से है जो बीज बोने के लिये तैयार किया गया हो

३—लेख नं० ४८९ भुतार्थ महि अत्रभुमक्षेत्रन कस्य दितग कृषंनए तस्मैथ अहुनो इश लिपेयस परिदे वक गिडेमि तह भुमक्षेत्र एदस····

४—लेख नं० ३२० "दव्य येन अत्र महि कृषितग ववितग हस्तंमि म्रहेयति यति एमेय
बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ २

इसे कृषन्तः और वपन्तः कहते हैं। निपुण कृषकों को पारिश्रमिक देकर खेती के कार्य के लिए रखे जाने की भी प्रथा थी[१]।

खलिहानों के लिए लेखों में गोठदे शब्द का प्रयोग है। लेख नं० ३६ की पंक्ति "*एदस दास चडयस गोठदे अर्थगिडति य....*" में दास चटय के खलिहान से अनाज चोरी जाने का वर्णन है। खलिहानों में अनाज इकट्ठा किए जाते होंगे, संभवतः इकट्ठा किए हुए अनाजों की *मड़नी* होती होगी, यद्यपि *मड़नी* का विवरण लेखों से नहीं मिलता है। बीज की महत्ता अधिक थी, क्योंकि कृषि-योग्य भूमि की बिक्री बीज के मूल्य पर होती थी[२]। बीज के लिए मिज शब्द का प्रयोग लेखों में है। बीज के मूल्य पर भूमि बेचे जाने का एक उदाहरण लेख नं० ४९५ से मिलता है। लेख के अनुसार यव-अवन के एक निवासी ने भूमि की विक्री की। भूमि के बीज का मूल्य १ मिलिमा १० खि था[३]। इस मूल्य के आधार पर भूमि की कीमत ३० मूली के एक तीन वर्षीय अश्व के भाव पर तय हुई[४]। बीज के मूल्य पर भूमि के क्रय-विक्रय का उल्लेख अन्य लेखों से भी प्राप्त है[५]।

१—लेख नं० ३२० "अषमनुंश अत्र अस्ति अथोवग सर्पिग नम एत पुन पागनान्स लिहितव्य अवश····

२—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ११० भूमि का मूल्य क्षेत्र के नाम पर न होकर के मूल्य पर होता था।

३—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८६ आगे व्यापार शीर्षक लेख में खि और मिलिमा एक प्रकार का माप था। २० खि = १ मिलिमा।

४—लेख नं० ४९५—"से उदित भूम विक्रिद कल्पिगेयस क्रिद तत्र भूममि भी....दी मिलिमा

५—लेख नं० ४२२—५७९, ५८०, ७१९, ६७८

लेख नं० ३६८ से सिंचाई के कार्य का अनुमान होता है। लेख के अनुसार जोती हुई भूमि में पानी नहीं था। अतः दूसरे प्रदेश से पानी लाया गया[१]। एक स्थल पर गेहूँ में तीन और चार बार पानी पटाये जाने की बात लिखी है[२]। इस सिंचाई व्यवस्था की क्या विधि थी, इसका विवरण नहीं ज्ञात है, किन्तु मरुस्थल होने के कारण खेती के कार्य में असुविधाएँ थीं, जिसका समाधान वहाँ के लोगों ने सिंचाई व्यवस्था से किया। लेख नं १६० खेती के लिए पानी और बीज खरीदे जाने का उल्लेख करते हैं[३]।

अंगूर की खेती का उल्लेख विभिन्न लेखों से प्राप्त है। फलों में अंगूर और अनाजों में गेहूँ, बार्ली और *अडिंनी* के नाम हैं, जिनकी खेती प्रधानरूप से होती थी[४]। लेख नं० ७०२ मसालों की एक सूची देता है—लेख की पंक्ति है—"*घने १ मरीच घने ३ शिंगवेर, प्रखम १ विपलि द्रखम २ त्वच घने १ सुषमेल घने १ शकर सदरे ४*" घने एक छोटा तौल है, मरीच = मिर्च, शिंगवेर = अदरख, पिपली = पीपल, त्वच = सुगंधित मसाला, सुषमेल = इलायची, और शकर = शक्कर, का उल्लेख करता है[५]।

चीनी तुर्किस्तान की फसलों में इन मसालों की गणना भी उल्लेखनीय है। लेख के बीच में शब्द मिट जाने के कारण अस्पष्ट

१—लेख नं० ३६८—नदी अवव्यगत कृषिवत्रमि उदग नस्ति हुत अनोदक हुत लहुनो तेष राजंमि उदग निर्वतविद्व्य न शक्य तेष"

२—लेख नं० ७२—ज हुम द्विवर त्रेवर उतग पे तग तस्येष....

३—लेख नं० १६०—

४—ए० स्टाईन, एंशियन्ट खोतान, पृष्ठ १३०,

५—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ १४१

है, अतः यह वहाँ के खेती की उपज थी अथवा विदेशी माल था, यह ज्ञात नहीं है। किन्तु अधिक संभव है कि यह वहाँ की ही उपज थी। स्टाईन ने खोतान की खेती में गेहूँ, चावल, बाजरा, जौ जई का नाम बताया, जो भारत की ग्रीष्म ऋतु की फसलें हैं।

कृषकों को अतिवृष्टि की अपेक्षा अनावृष्टि से ही अधिक परेशानी होती होगी। खेती के लिये पानी की कमी का ही उल्लेख लेखों से मिलता है[1]। किन्तु एक स्थल पर बाढ़ के कारण खलिहान और गृह सब बह जाने का उल्लेख है[2]। "लाग-अनल" खोतान की नदियों का वर्णन देते हैं। जो मरुभूमि में जाकर सूख जाया करती थीं। इस वर्णन के अनुसार चीन की भाँति खोतान में अनाज, फल, सब्जी हुआ करती थी[3]। ह्वेन-त्सांग के विवरण से मालूम होता है कि खोतान की भूमि पाँच प्रकार के अनाज के लिए उपयोगी थी। विशेषकर शहतूत और पटूए के वृक्ष अधिक थे। शहतूत के पत्ते रेशम के कीड़ों के लिए बहुत ही उपयोगी थे। कूचा और खोतान की उपज प्रायः एक-सी थी। खोतान के वर्णन में ह्वेन-त्सांग ने पुनः लिखा कि खोतान का अधिक भाग मरुस्थल था, कुछ भूमि खाद्य पदार्थों अनाज की उपज के लिए उपयुक्त थी। भूमि और मौसम फल की उत्पत्ति के लिये अच्छे थे[4]। सम्पूर्ण पूर्वी तुर्किस्तान में खोतान

१—लेख नं० ३६८—"नदी अवव्यगत कृषि कामि उदग नस्ति हुत"

२—लेख नं० ४७—"लिपिपेय विर्मं विति यथ एद्स गोथ, गृह वस अपगेयेन उदगेन उदगेन सरगित"

३—ए० स्टाईन—एंशियंट खोतान पृष्ठ १७०

४—वही ,, पृष्ठ १७१

५—वही ,, पृष्ठ १७४

कपास की उपज का केन्द्र था। अधिक से अधिक कपास और अन्न की खेती होती थी[१]।

पशुओं में ऊँट[२], अश्व[३], भेंड़[४] और गौ[५] अज बकरा[६] का वर्णन है। ऊँट बहुतायत की संख्या में थे[७]। मरुस्थल होने के कारण ऊँट वहाँ के पशुओं में प्रधान मालूम होते हैं। ऊँटों के लिए लेख में ऊँट शब्द का ही उल्लेख है।

पशु

सवारी और बोझ ढोने का कार्य अधिकतर ऊँटों से लिया जाता था। लेख नं० ५२ के अनुसार एक व्यक्ति ने बोझ ढोने के लिए एक ऊँट किराये पर लिया[८]। कभी-कभी ऊँटों पर इतना अधिक बोझ लादा जाता था कि अधिक बोझ के कारण ऊँट की मृत्यु हो जाती थी[९]। इस प्रकार

१—वही, ए० स्टाईन, एशियंट खोतान, पृष्ठ १३०

२—लेख नं ६

३—लेख नं० २४

४—लेख नं० ५६

५—लेख नं० ५६

६—लेख नं० ६३३

७—ऊँटों का उल्लेख अन्य पशुओं की अपेक्षा अधिक से अधिक लेखों में है। लेख नं० ४, ६, १०, १६, २१, २४, ४०, ५२, ७४, ७७, ८२, ८३, ८४, ११९, १२२, १५७ आदि।

८—लेख नं० ६—"सघ उटि धरगन....
लेख नं० १६—"ददवो एति वर्ष नपलपि उट
लेख नं० २१—"एदस उट दुई पत...

९—लेख नं० ५२—"न महि परिक्रपेन नयमि उट सवित एद परिक्रयदे मय"....

की मृत्यु का उत्तरदायित्व बोझ लादने वाले का होता था[1]। ऊंट के दुर्बल और सबल शरीर का ध्यान रखते हुए उनसे कार्य लेने की आशा थी। यदि अधिक थकावट के कारण ऊंट यात्रा के लिए आगे न जा सके तो राज्य की ओर से यह आज्ञा थी की वह प्रदेश जहां वह रुका हो, उसकी उचित देख भाल करे,[3]। लेख नं० १२५ ऊंट का सवारी के रूप में उल्लेख करते हैं[4]। सैनिकों की सवारी में अश्व और ऊंट का उल्लेख है। १० नं० के लेख में कहा गया कि वह पेत-अवन में जन्म से ही *क्लेसेंचि* का कार्य कर रहा है। *क्लसेंचि* का अर्थ बरो के अनुसार एक पद है, जो सैनिकों के ऊंट और अश्व की देख-रेख करने वालों के लिए थी[5]। युद्ध क्षेत्र में ऊंट भी अश्व की भांति सैनिकों के कार्य में आते थे। दो ऊंट और एक निर्देशक रक्षक-सैनिक इन्द्रे से दिए गए[6]। लेख नं० १८२ में राज्य के ऊंटों के रक्षक का उल्लेख है। लेख के अनुसार

१—लेख नं० ४०—यदि....दर्षिदगेन मरिष्यति वलग घरनग भविष्यति अथव स्वमरंनेन मरिष्यति तत्रेपि रजंमि पंचरे ददवो।

२—लेख नं० ४०—

३—लेख नं० ४०—"उट दुर्बले भविष्यति न शाक्ष्यिति रछंनये तत्रैपि रजंमि परिपलिदव्य"

४—लेख नं० १२९—"अरि-अपेंनस उट अचोवंमि उकसिदव्य......"

५—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८९ लेख नं० १०—"पेत अवनंमि.... क्लसेंचि पितर पित—

६—लेख नं० ३६७—"स च दे उट २ वलगं च ददव्य सिमंमि लेषिशंति तदे च

कंजक राजधानी के ऊँटों का पालक अथवा रक्षक था[1]। लेख नं० ८२ भी ऊँट रखने वालों का उल्लेख देता है। ऊँट ऋण के रूप में,[2] कर में और सम्पत्ति की भांति वस्तु विनिमय के मूल्य के रूप में व्यवहार किए जाते थे। लेख नं० १६ से ज्ञात होता है कि कर में अधिक आयु वाले ऊँटों को नहीं लिया जाता था। १२ वर्ष की आयु से अधिक के ऊँट कर में देने योग्य नहीं थे[3]। ऊँट, कन्या के क्रय-विक्रय में, कन्या के मूल्य स्वरूप दिए जाते थे[4]। लेख नं० ६२४ के अनुसार एक व्यक्ति ने भूमि की कीमत में चवल नामक व्यक्ति को एक ऊंट का मूल्य उसकी आयु से मापा जाता था[5]। अश्व का उपयोग सवारी के काम में विशेष रूप से था। सैनिकों के लिए अश्व और ऊंट ही उनकी सवारी के लिए थे[6]। ऊँट की भांति अश्वों को भी ऋण और उपहार में देने का उल्लेख है[7]। राज्य के कार्यों के लिए अश्व बहुत ही सहायक थे।

१—लेख नं० १०—"अहोनो इश कंजक विवेति यथ इश सक उटवल पूर्व

२—लेख नं० ६ और १६

३—लेख नं० १६ "अंडरंमि उटन अझि जो दश वर्ष न अतिदये किल्मुंत्र अत्र एशति प्रठ पिडित मंत्र ददवो एर्ति वर्ष न पलिप उड

४—लेख नं० ५८९, ५९२....

५—लेख नं० ७१५...लेख नं० ५८९ "सच उट। नो वर्षग संम "ति कुडी समित्सेन नाम विक्रत तित मुली उट, एक वर्षग चपरिश मुल्येन"..

६—लेख नं० १०—लेख नं० ११९—

७—लेख नं० २४—और २४३, अश्प-अश्व बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग—७ पृष्ठ—७७९

गौ के लिए गो शब्द का ही उल्लेख है[1]। गौ का क्रय-विक्रय हुआ करता था। लेख नं० १२२ में राजधानी की "गौ" उपहार में दी जाने का वर्णन है। राजा और रानी के अलग-अलग गोशाला का उल्लेख है, जिसके लिये गोपालकों की नियुक्ति होती थी[2]। लेख नं० ४३९ के उल्लेखानुसार राजा की गौओं के लिए वही व्यक्ति गोपालक हो सकता था, जो किसी अन्य कार्य का अधिकारी न हो। अतः एक ही विभाग का अधिकारी हो सकता था[3]।

खरोष्ठी लेख भेड़ों का भी उल्लेख करते हैं[4]। खरोष्ठी लेख और चीनी यात्रियों के विवरण से ज्ञात होता है कि मध्यएशिया के इन प्रदेशों में ऊन का कारोबार खूब होता था। अतः भेंड़ पालने वालों की संख्या अधिक थी[5]।

लेख नं० ६३३ बकरा अथवा अजपालकों का उल्लेख करता है। बकरे का लेन-देन साक्षी के सामने लिखा पढ़ी के साथ होता था[6]। बरो ने लेख के *हेडि-पशव* का अनुवाद बकरा

१—लेख नं० ७६७ "हितंति गो प्रचेय अरि लिपपनस गोथद्रे ल्सिमयस गो···

बी० एस० ओ० एस० भाग ९, पृष्ठ ११२

२—लेख नं० ४३९ भीमसेन विषावेति वथ एव देवियए गवि पडिछितग यव····

३—लेख नं० ४३९ रयक गवि न कुवी पिचविदव्य यो द्रगं ने धरितग सियति तस रयक गवि पिचविदतो।

४—लेख नं० ५६, ५१९

५—लेख नं० ५६८

६—लेख नं० ६३३ "तु अवि हेडि पशव अवस किनिदवो यं च लभिशंतु···

किया[1]। *पशव* संभवतः बकरों के लिए व्यवहार में आया है[2]।

पशुओं की रक्षा का उत्तरदायित्व पशुपालकों को था। पशुओं पर अत्याचार करने वालों को राज्य की ओर से उचित दंड मिलता था। लेख नं० २६२ के लेख के अनुसार भगरक नामक एक व्यक्ति ने ऊँट को मार डाला। फलस्वरूप राजा की ओर से उसे बन्दी बनाए जाने की आज्ञा दी गई[3]। पशुओं के लिए चारागाहों का प्रबन्ध था। लेख का कभोद पशुओं के चारागाह का अर्थ देता है[4]। *यथ एतस कभोढमि वडवि स्तोरं च, तह जंन तत्र नचिर गछन्ति, वडवि अश्प विजति*" में कभोद निजी चारागाह का उल्लेख करता है[5]। चारागाहों में पशुओं की पूरी रक्षा का प्रबन्ध था। उदाहरण के लिए लेख नं० १३ का विवरण है कि कुछ लोगों ने चारागाह के अश्व और अश्विनी को शिकार में घायल किया। इस अनुचित

१—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ १३१

२—लेख नं० ६३३ "तस परिदे शोथेदवो यहि पशव बहु लभिशंतु सुक्मनेन सर्घ इश अतिदवो
लेख नं० १३९-७४३ "एतस अखिगस तनु स्तोहेन गंततो" स्तोर का अर्थ पशुओं का झुण्ड, देखिए, बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७

३—लेख नं० २६२ "यथ एदस भगरक मरित एद अचेय द्वति इमेद अनति किलमुद्र अत्रगछति अदेहि हस्तगत···

४—लेख नं० १९ "वरिदतो न इंचि कभोढमि नचिर गंदवो घरिद··
बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८१

५—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७, पृष्ठ ५१३
एफ० डब्लू० थामस, अक्टा ओ० भाग १३, पृष्ठ ७०

कार्य के फलस्वरूप राजा ने अधिकारियों को किलमुद्र (wedge tablet) भेज कर उन शिकारियों पर रोक लगाने की आज्ञा दी[२]।

गोपालन दुग्धोत्पत्ति का संकेत करता है। घी के लिए घ्रिद शब्द लेखों में है[३]। घी बनाना यहाँ के लोगों को सिर्फ ज्ञान ही नहीं था वरन् अधिक से अधिक मात्रा में घी तैयार होने का विवरण मिलता है। लेख नं० ५१४ हजारों घड़े घी का उल्लेख करते हैं[४]। घी की चोरी बहुधा खलिहानों से हो जाती थी[५]।

भेड़ से ऊन निकालने का काम लिया जाता था, जिससे ऊनी कपड़े तैयार होते थे। चीनी, तुर्किस्तान के लोगों का मुख्य पहनावा ऊनी कपड़ा था, अतः भेड़ों से ही ऊन निकाल कर विभिन्न प्रकार के वस्त्र बनते थे।

पशु-सम्पत्ति, चीनी तुर्किस्तान के लोगों के लिए बड़े ही महत्व की थी। व्यवसाय की दृष्टि से पशुपालन की महत्ता को समझते हुए लोग पशुओं की रक्षा, और उनके चारागाहों

१—लेख के शब्द—"किलमुद्र" Wedge tablet के अर्थ में है।

२—लेख नं० १३—"किलमुद्र अत्र एशति अठ एद विबद समूह अनद प्रोछिदवो यथ घमेन निचेकर्तवो जंन वरिदवो म इंचि भूय न चिर गछंति"

लेख नं० १९ का भी यही विषय है।

३—लेख नं० १३—"तत्र घ्रिद नठ यहि" लेख नं० १९—"गदवो घ्रिद चोरितमं"

४—लेख नं—५१४—घ्रत कुंव सहस्रजि....

५—लेख नं० १९—घ्रिद चोरितग प्रचे....

के प्रवन्ध के लिए अधिक सावधान थे। ह्वेन-त्सांग ने खोतान का वर्णन करते हुए बताया है कि खोतान में पशुओं की संख्या बहुत थी। पशुओं में भी ऊँट अधिक थे[1]। खरोष्ठी लेखों में वित शब्द पशुओं के साथ आया है। यह वास्तव में पशु संस्कृत-वित्त को सम्पत्ति का एक बड़ा भाग बताया है।

सोने के आभूषण गढ़ने के लिए लेख में स्वर्णकारों का उल्लेख है[2]। चीनी तुर्किस्तान के खनिज पदार्थों में स्वर्ण प्रमुख था। लेख नं० ५७८ का सुवर्णकार स्वर्णकारों का परिचय देता है।

काष्ठशिल्प और उद्योग

नीया से जितने खरोष्ठी लेख प्राप्त हुए हैं, उनमें अधिक तख्ती पर लिखे मिले हैं, तख्तियों में कुछ आयताकार, कुछ चतुर्भुज और कुछ पंचभुज के हैं। इन भिन्न भिन्न आकार के तख्तियों के लिए बढ़ई रहे होंगे, जिनका कार्य काष्ठ तैयार करना रहा होगा[3]। काष्ठ की ही भाँति चर्म-पत्रों का उल्लेख है। खरोष्ठी लेखों को देखने से मालूम होता है कि लोग बहुत ही सावधानी से इस प्रकार का चमड़ा तैयार करते थे[4]। निश्चय ही यह कार्य चर्मकारों का होगा।

शिल्प कला में कालीन, नमदा और रेशम के कार्य में वहाँ के लोग दक्ष थे। खरोष्ठी लेखों में तवस्तग शब्द का उल्लेख है। प्रो० थामस और वरो ने इस शब्द का अर्थ कालीन अथवा

१—श्री स्टाईन, "एंशियंट खोतान" पृष्ठ १७४

२—लेख नं० ५७८—"वितित भविष्यति अवि च सुवर्णकर पर्व तियत अत्र...."

३—देखिए विषय-प्रवेश में खरोष्ठी अभिलेखों का स्वरूप—

४—वही

ग़लीचा बताया[1] है। बेली ने ७१४ नं० लेख के *थवस्तये* का अर्थ ग़लीचे के कपड़े से लिया[2]। ऊन और रेशम के लिए चीन और चीनी तुर्किस्तान के प्रदेश प्राचीन काल से प्रख्यात हैं। भेड़ की संख्या अधिक थी। अतः ऊन सहज ही में मिल जाता था। रेशम के कारोबार का तो यह मुख्य केन्द्र ही था। ऊनी और रेशमी वस्त्र तैयार करने में यहाँ के लोग प्रवीण थे, इसका उल्लेख ह्वेन-त्सांग ने भी खोतान के यात्रा-वर्णन में लिखा[3] है। खरोष्ठी लेख कसीदे के काम का भी उल्लेख करते हैं।

पीतल के कार्य में खोतान के लोगों की निपुणता का उल्लेख ठाग-अनल में है[4]।

खरोष्ठी लेखों में व्यापारियों के लिए बनियें शब्द का प्रयोग है[5]। संस्कृत के *वणिक* का अपभ्रंश *बनिया* शब्द का व्यवहार हिन्दी भाषा में व्यापारियों के लिये है। खरोष्ठी लेख का

व्यापार

बनिये और हिन्दी भाषा का "बनिया" दोनों शब्दों की समता संस्कृत के वणिक शब्द से की गई है। संभवतः इन दोनों शब्दों का मूल वणिक है।

१—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ६१२,
लेख नं० ४३१—"तसभगेन तवस्तग त्रोदय"

२—बेली, बी० एस० ओ० एस० भाग ११, पृष्ठ ७९३

३—श्री स्टाईन, एंशियंट खोतान, पृष्ठ १७४

४—वही, वही, पृष्ठ १७०

५—लेख नं० ३९—"सुगीत वरिदवो अहोनो चीनसपनदे नस्ति वनियें अहोनो पट ऋन न प्रोछिदवो उड प्रचेंत चीन..."

लेखों से वस्तु-विनिमय की प्रथा का ज्ञान मिलता है। सम्पत्ति के अन्तर्गत पशु, दास, दासी और स्त्रियों की गणना होती थी, अतः चल सम्पत्ति के स्वरूप में इनके क्रय-विक्रय, और लेन-देन की चर्चा लेखों से मिलती है, जिसका विवरण उन प्रसंगों में किया जा चुका है। व्यापारियों के लिए पशुओं का महत्व व्यापार के कार्य में अधिक था। लेख के अनुसार वासुदेव ने अपने पिता को लिखा कि मैं कोरयिन से यहाँ आया और हमने रेते ऊँट खरीदा, किन्तु अब तक यहाँ कोई खरीद-बिक्री नहीं हुई[1]। इस लेख से ऊँट के नियमित व्यापार का संकेत मिलता है।

बहुधा वस्तुओं का लेन-देन पशुओं के मूल्य पर होता था। लेख नं० १८६ में भूमि की बिक्री से मूल्य में एक गाय और एक बछिया पाने का उल्लेख है[2]। इसी प्रकार लेख नं० ४९५ अश्व देकर भूमि का मूल्य चुकाने का उल्लेख करता है[3]। एक प्रदेश से दूसरे प्रदेशों में वस्तु विनिमय के लिए पशु को किराये पर लिया जाता था और उनसे कई प्रकार के कार्य लिए जाते थे[4]। लेख नं० ६८६ की पंक्तियों के बीच के शब्द मिट गए हैं, किन्तु लेख से चीन और खोतान देशों में गौ के जाने का संकेत है।

१—लेख नं० ६९६—"एवं च विज्ञाति स च अहु कोरयिनदे इश अगतेमि रेते उटं च अमिदेमि न अजग्र क्रय-विक्रय भवति एत तहि पदमुलंमि विदित करेमि अहु इहमि कोरयिन निवर्तनए यो अत्र तहि पडिवति भव्यति एमेव" देखिए, अक्टा० ओ० भाग १२ पृष्ठ ९४

२—लेख नं० १८६—

३—लेख नं० ४९५—

४—लेख नं० १९९—

कुछ लेखों में सौदा-पक्का करने के उत्तरदायित्व का उल्लेख मिलता है। लेख नं० ४९५ न्यायाधीश के सम्मुख भूमि-बिक्री का सौदा पक्का करने का विवरण देता है, एक अश्व और ३० मुली के भाव पर भूमि का मूल्य तय हुआ[१]।

इस प्रकार के उदाहरण अन्य लेखों से भी प्राप्त हैं जहां क्रय-विक्रय के लिए विक्रेता को न्यायाधीश और साक्षी की शरण लेनी पड़ी है[२]।

"शराब" का उल्लेख कई लेखों में है, जिसका व्यापार अन्य प्रदेशों में हुआ करता था[३]। अंगूर की खेती शराब बनाने के लिए ही करते होंगे। ऐसा अनुमान होता है। शराब बनाने और उसके लेन-देन के कार्य के लिए एक अलग ही कार्य-विभाग का उल्लेख है, जिसे "शराब-विभाग" कहा गया[४]। अधिक से अधिक मात्रा में शराब तैयार होती थी। लेख नं० १७५ "*पुरन ४३ निकस्त रयद्रंमिं मिलिमा एक १ खि १३*...." राजद्वार के पुरानी शराब का उल्लेख देता है। लेख के वाक्य अधूरे हैं। अतः अर्थ स्पष्ट नहीं होने पर भी नई और पुरानी शराब के भेद का अनुमान होता है। लेख नं० २४७ मोहर लगा कर शराब

१—लेख नं० ४९५—"उथिद भूम विक्रिद कल्पिगेयस क्रिद तत्रभूमंमि.... मिलिमा १ खि १० तित मूली अंस त्रेवर्षग त्रिश मूली षडिछिदये समेन"

२—लेख नं० ३२७—
लेख नं० ४१९—

३—लेख नं० १७९, २४४, ३१७, ३२९, ३४९, ३४७, ५६७

४—लेख नं० ५६७—"षोथंग हुद मोथमि सुथ विनथग इस मसुवी द्रंगमि गनंन क्रिडये डुद षोथंग सूगीय पिग्सस च घरमग"

भेजे जाने का उल्लेख करता है। लेख का विवरण है कि यह तीसरा वर्ष है कि तुमने अब तक शराब नहीं भेजी।......बिना किसी रुकावट के शदवित सूगत शर्दनिदत, राजकीय पद के द्वारा शीघ्र शराब भेज देना है और साथ ही चोभ्रत्रो के मुहर के साथ शराब भेजी जानी चाहिए[1]। लेख की पंक्तियाँ यद्यपि, अधूरी हैं, फिर भी जितना पठनीय है, उससे शराब के व्यापार का स्पष्ट ज्ञान होता है। लोगों में शराब की मांग अवश्य ही अधिक रही होगी। मुहर उन लोगों के वस्तु विनिमय की व्यवस्था में सुरक्षा का उल्लेख करता है।

शराब ऋण में,[2] ऋणशेष चुकाने में[3] और वस्तु के मूल्य में दिए जाने के कार्य में आती थी। राज्य-दरबार में शराब की खूब खपत थी।

घी का व्यापार भी शराब की भांति खूब होता था। लेख हजारों घड़े घी का उल्लेख करते हैं[4]। लेख नं० १५९ इन्दरे और

१—लेख नं० २४७—

(क) भटरगस प्रियदेवमनुशन पिंचर-दिव्यवर्ष-शतासु-प्रमानन प्रियभरतु-चुगप-प्रियशयस च पदमुलंमि—य नंमकेरो करेति दिव्यशरीर-अरोगि प्रषे....

(ख) दिव्यानंमि महि मसु गिभिदवों यं त्रिति वर्ष हुत एद मसु न इश विसजेतु....

२—लेख नं० २४४—"झेनिग हुतु अवि मसु अवमिथि जमंन वंति अवश अनवितवो"

३—लेख नं० १६८—

४—लेख नं० ५१४—"घ्रितकुंब सहस्रनि...."

नीया प्रदेशों से घी के व्यापार की बात करते हैं। पशुओं पर लाद कर घी के घड़े एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश को जाते थे। इस लेख से ज्ञात होता है कि घी व्यापार राज्य की ओर से भी होता था। शदविद एक राजकीय पद था। राजा की आज्ञा के अनुसार शदविद के द्वारा दो घड़े घी इन्देरे और नीया प्रश देके लिए भेजे गए, जिसमें एक घड़ा इन्देरे के लिए दूसरा नीया के लिए था। राजा, वर्ष में किनता घी तैयार हुआ इसका लिखित व्यौरा चाहता था[१]। अन्य लेखों से कभी घी चोरो जाने का और कभी घी के लेन-देन का उल्लेख मिलता है।

लेख नं० ३५ में रेशम के चीनी व्यापारियों का उल्लेख है[२]। चीन के रेशमी कपड़े प्रसिद्ध हैं। चीनी तुर्किस्तान के वस्त्रों में भी रेशम के थानों का उल्लेख है। रेशमी थान के लिए लेखों में पट शब्द का प्रयोग है। वस्तु के क्रय-विक्रय में दंड की मुक्ति में, और उपहार में रेशमी थानों की लेन-देन होती थी। लेख नं० ५८३ और ५४९ खोतान के रेशमी कपड़ों की चर्चा करते हैं[३]।

१—लेख नं० १६९—"श अवित अदेहि सचदे रयक गन्त्रियन ग्रिद चडोति स्तोरस्य ओरोवग छोरिंदवो यहि चडोटा कुम्बु अत्रअग"

२—लेख नं० ३९—"चीन विहेडिदवों यं कल चिनएथनदे वनिये अगमिष्यति तं कल पट ऋन प्रोछिदवो यदि विवद स्यति रयद्वरंमि समूह निचे भविष्यति"

३—थामस, अेक्टा ओ० भाग १२, पृष्ठ ६४ कोजव-कौश्ये

लेख नं० ५८३—

लेख नं० ३ के अनुसार सुगीसय नाम की एक स्त्री के मूल्य में ४१ रेशम के थान दिए गए[1]। भिक्षु-संघ के नियम की अवहेलना करने वालों को रेशम का एक थान दंड स्वरूप देना पड़ता था[2]। रेशम का व्यवहार चीनी तुर्किस्तान के लोग स्वयं भी बहुत करते थे और अन्य प्रदेशों में इसका व्यापार भी होता था।

लेख नं० १४० स्वर्ण के क्रय-विक्रय की बात कहते हैं। इसमें स्वर्ण का मूल्य पूछा गया, जो बिक्री के लिए थे। सोना स्वर्ण के नाम से व्यवहार में आता था, लोग संभवतः पर्वत के निकट स्वर्ण के लिये गए[3]। चीनी तुर्किस्तान के स्वर्ण-खान की चर्चा अन्य साधनों से भी उपलब्ध है। बच्चों की परवरिश के लिए भी स्वर्ण मूल्य स्वरूप दिये जाते थे, ऐसी संभावना लेख नं० १७७ से होती है।

कालीन, गलीचे चीनी तुर्किस्तान के प्रसिद्ध थे। श्री मकगवर्न ने लिखा है कि कालीन, गलीचे आदि के लिए यहाँ के लोगों को मध्यएशिया में विशेषकर चीनी-तुर्किस्तान के लोगों पर निर्भर करना होता था[4]।

खरोष्ठी लेख, कालीन और कम्बल की अधिक से अधिक खपत का उल्लेख करते हैं। कालीन की बिक्री उसके माप से

१—लेख नं० ३—"यथ एष स्त्री सुगीसये मूली दिद मूली पट ४१ यहि एद कीलमूद्र

२—लेख नं० ४८९—

३—लेख नं० १४०—"अवि च तत्रसुवर्ण मरगंति—सुवर्ण पर्वती तोल, यन अत्र प्रै हिदेमि तहि लिपम्सुस एद कर्यमि चिन कर्तवो केवि तत्र सुवर्ण मूली तेन विधनेन एद विक्रिदव्ये"

४—श्रीमकगवर्न, अर्ली इम्पायर आफ सेण्ट्रल एशिया चपल हिल, पृष्ठ ९३

होती थी। लेख नं० ५२७ में १२ हाथ लम्बे कालीन के मूल्य की बात कही गई[1]। हाथ से मापने की यह रीति भारत में भी प्रचलित थी और है। एक स्थल पर १०१ कम्बलों को काजब देने की बात है[2]।

व्यापारियों को पशुओं से बहुत लाभ था। पशुओं के क्रय-विक्रय का उल्लेख लेख के अधिक से अधिक प्रसंगों में है[3]। पशुओं की भाँति दास और कन्या के व्यापार की चर्चा लेखों में है[4]। लेख नं० ५९१ से इस प्रकार के एक मनुस के खरीद का उदाहरण मिलता है। उस व्यक्ति का मूल्य ५ वर्ष के एक ऊँट, ५ वर्ष के एक अश्व और २५ *अत्ग* के मूल्य पर तय हुआ। इस मूल्य पर विक्रेता सहमत हुआ। इस खरीद के पश्चात् खरीदने वाला व्यक्ति उस व्यक्ति का पूर्ण अधिकारी समझा गया। उसे पीटने का, बेचने का, बंधक में या उपहार में देने का कानून की ओर से अधिकार प्राप्त था। खरीदा हुआ व्यक्ति अपने स्वामी की सम्पत्ति माना जाता था[5]। लेख नं० १८० में ऊँटों की एक सूची है, जिसमें ६ खोतान के ऊँटों की गणना की गई है[6]। संभवतः व्यापार के लिए इन ऊँटों की सूची तैयार की गई[7]।

१—लेख नं० ५२७—

२—लेख नं० १७३—"सुगियस शदमि कोजव १ ददवो ङ्गचस ंघमि मसू

३—पशु—इसी अध्याय में—

४—देखिए, समाज की रचना दास द्वितीय अध्याय में

,, स्त्रियों का स्थान चतुर्थ अध्याय में

५—लेख नं० ५९१—

६—लेख नं० १८०—

७—थामस, ऐक्टा० ओ० भाग १२ पृष्ठ ५४

खरोष्ठी लेखों से ज्ञात होता है कि लोग वस्तु विनिमय में बहुधा शराब, घी, कई प्रकार के अनाज, बुने हुए कपड़े मूल्य के रूप में दिया करते थे। पशुओं में गाय और ऊँट के नाम उल्लेखनीय है, जो इस प्रकार के लेन-देन के

सिक्के और माप तोल काम में आते थे। सिक्कों का व्यवहार बहुत कम होता था, ऐसा खरोष्ठी लेखों से अनुमान होता है। इन सिक्कों में कुछ के नामों का उल्लेख लेखों में है।

इन सतेर, द्रव्य या त्रस्य, मुलि, कम्पो माश, घने, भमक के नाम आते हैं[1]।

कुल ७८२ लेखों में *सुवर्ण-सतेर* अथवा *सुवर्ण-सदेर* का उल्लेख केवल चार लेखों में है और *सदेरस* अकेला ७०२ नं० के लेख में आया है। *सुवर्ण-सतेर* की समता कई विद्वानों ने ग्रीक के *स्वर्ण स्तेतर* से किया है[2]। प्रो० थामस ने खरोष्ठी लेख के *वसु योनु* पर ध्यान देते हुए कहा कि यह ग्रीक कुल, अथवा वंश का संकेत है।

१—लेख नं० ३२४, ४३, ४१९, ४३१

२—थामस, ग्रीक स्तेतर इन सेन्ट्रल एशिया, जे० आर० ए० एस० १९२६ पृ० ६०७

वही जे० आर० ए० एस० १९२४ पृष्ठ ६७१–२

वही स्टैन कोनो पृष्ठ २९९–६

वही

एच० डब्लू० बेली—बी० एस० ओ० एस० १९४९

इनके अनुसार *सतेर* और *द्रव्य* ग्रीक स्तेतर का एक भेद है। और यह शब्द भारत होते हुए खोतान पहुँचा है[१]। स्टेन कोनो ने स्तेतर द्रव्य के साथ *सतेर* व *द्रव्य* की विवेचना करते हुए बताया कि यह दोनों शब्द गान्धार से चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों में गए। और सतेर ग्रीक स्तेतर की ही देन है[२]। खरोष्ठी लेख में *सवरे* शब्द के साथ *सुवर्ण* स्वर्ण विशेषण के उल्लेख से यह अनुमान होता है कि चीनी तुर्किस्तान के सभी *सतेर* स्वर्ण के ही नहीं थे, जैसा कि बैक्ट्रिया और ग्रीस के थे। चीनी तुर्किस्तान में चांदी के *सतेर* का भी प्रचलन था[३]। अतः *सुवर्ण सदेर* चांदी के *सतेर* से भिन्न था[४]।

लेख नं० ४३ के *कनक शक्रस्यमि कम्पो*। *सुवर्ण सदेर* २ एक *कम्पो* और २ सतेर एक स्वर्ण *कनक* के छोटे बरतन में पाये जाने का उल्लेख करते हैं। *कम्पो* का

कम्पो— अर्थ अज्ञात है किन्तु अनुमानतः यह भी किसी एक सिक्के का संकेत है[५]। बरो ने *कम्पो* स्वर्ण के घने किसी चीज के लिए बताया[६]।

१—जिसे द्रास्य कहते हैं इसे भारत में यवन राजाओं ने चलाया था, और इनका साधारणतः वजन ६७ ग्रेन होता था। स्तेतर का वजन १३२ ग्रेन होता था। इन सिक्कों के नाम जिन पर ग्रीक प्रभाव है, संभवतः भारत से मध्यएशिया को गए।

२—स्टेन कोनो, ऐक्टा० ओ० ६, पृष्ठ २९६

३—थामस के उल्लेखानुसार ६ सतीर चांदी के जिसे कि एक जर्मन अभियानी ने १९०२-३

४—रतनचन्द्र अग्रवाल, जे० एन० एस० आई० १९६३

५—वही " "

६—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८१

मश का कई लेखों में उल्लेख है। लेख नं० ५०० "*श्रमेन मोद प्रियस परिदे माव त्रिड सहस्र। सो ओ*

माशा— *विक्रिनमि मुयनं सहस्र अष्टि माशा* भारत का सिक्का ही मालूम होता है[1]।

लेख ७०२ पुत्र के जन्म पर कुछ चीजें भेजे जाने का उल्लेख करता है। इन चीजों का मूल्य भी चीजों

घने— के नाम के साथ दिया है—"*मरिच घने ३ शिगवेर द्रव्य १ पिपलि द्रस्थम् २ त्वच घने १ सुत्मेव घाने १ शकर सदेर ४*

"घने" की समता उत्तरी फारसी के *दांग*, अरबी के दानक और पह्लवी "*दांग*" से की गई। इन शब्दों का मूल उत्तर फारसी का दानक है। *दांग*, जैसा कि पह्लवी साहित्य से ज्ञात है चांदी का एक सिक्का था। घने भी इस प्रकार का कोई सिक्का होगा[2]। बरो ने इस शब्द की इरानियन उत्पत्ति बताई[3]।

१—मनु—एक चांदी के माशा की तौल २ रत्ती और १ चांदी के कार्षापण १६ माशा।

२—रतनचन्द्र अग्रवाल, "न्यूमिसमेटिक डेटा इन दि निया डाक्यूमेन्ट" जे० एन० एस० आई० पृष्ठ २२९

३—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग—७ पृष्ठ ७८३

अध्याय—छठा

वेष-भूषा, रहन-सहन

लोगों की वेष-भूषा शिष्ट और परिष्कृत थी। उनमें भिन्न-भिन्न वस्त्रों की रुचि थी और इसका उपयोग भी लोग भलीभांति जानते थे। भारत और चीन की सभ्यता का प्रसार चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों में था ही, पहिनने के वस्त्रों में भी कई चीनी और भारती वस्त्रों के नाम वहां मिलते हैं। ह्वेन-त्सांग ने खोतान के लोगों का वर्णन करते हुए बताया कि कुछ लोग ऊन और "फर" के बने कपड़े पहनते थे और कुछ तापता रेशमी कपड़ा और सफेद कपड़ों का व्यवहार करते थे[1]। लोगों का आव-भाव उनकी शिष्टता का परिचय देता था। शुंग-युन ने खोतान की स्त्रियों के लिए लिखा है कि स्त्रियां पाजामा और मेखला पहनती थीं और पुरुषों की भांति घोड़े की सवारी करती थीं[2]। खरोष्ठी लेखों में लोगों के पहिनने के वस्त्रों में कुछ के नाम हैं, जिनका समीकरण कुछ विद्वानों ने किया है।

वेश-भूषा

लेख नं० ३१६ के अनुसार चुकपए ने अपनी बहन को लिखा कि मैंने तुम्हें रेशम *प्रिघ* का बना एक पंजवंत भेजा है और

१—स्टाईन, एंशियंट खोतान, पृष्ठ १३९

२—वही वही पृष्ठ १७०

चोटग अथवा चाड्ग[२]

तुम मुझे एक चोटग भेजो[१]। बरो ने यहाँ लेख के चोटग का अनुवाद कोट अथवा लवादा किया[३]। चुकपए एक स्त्री का नाम था। अतः इस लेख में चूंकि एक स्त्री ने कोट की मांग की, इसलिए चोटग का सम्बन्ध संस्कृत के चोल से हो सकती है, ऐसी एक संभावना श्रीरतनचन्द्र अग्रवाल ने बतायी[४] है। लेख नं० १९ और ५०६ में दास और भृत्य अथवा अनुसार को चोडग दिए जाने का उल्लेख है[६]। लेखों से ज्ञात होता है कि पारिश्रमिकों को परिश्रम के फलस्वरूप भोजन और वस्त्र पचेवर और चोडग देने की प्रथा थी। लेख नं० १९ में "चोडग और पचेवर एक स्त्री को उसके वेतन के एवज में दिया गया, किन्तु लेख नं० ५०६ में दूफ पुरुष दास का उल्लेख करता है, जिसे चोडग दिया गया था। अतः इन लेखों के प्रसंग से अनुमान होता है कि चोटग या चोडग एक ऐसा वस्त्र था, जो स्त्री और पुरुष दोनों के

१—लेख नं० ३१९—"राजथमेन चोड्ग पचेवर परिक्रुच ददवो"

२—लेख नं० ३१६—"चुकपये अरोगी प्रेषेति बहु अपरिमन एवं च प्रहिदस्मि पंझपंत प्रियसग न अवश महि चोटग विसर्जिदवो"।

३—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ९८

४—संस्कृत चोल छोटे ब्लाउज को कहते हैं। प्राचीन काल की भारतीय स्त्रियों का भी यह पहनावा था, रतन चन्द्र अः टेक्सटाईल पृष्ठ ८६

५—श्री रतनचन्द्र अग्रवाल, टैक्सटाईल पृष्ठ ८६

६—लेख नं० १९—"राजथमेव चोडग पचेवर परिक्रय ददवो"
लेख नं० ५०६ ततिगस गोथदरे भत चोडग तितंतिमहि दझचोरित...

७—रतन चन्द्र, टैक्सटाईल पृष्ठ ८६

व्यवहार में आता था[१]। हो सकता है कि यह कोट की भांति एक लम्बा ढीला-ढाला गरम लबादा हो, जिसकी आवश्यकता वहां के ठंढ मौसम में पड़ती हो।

"कवशी या कवजी"

बरो,[२] और बेली[३] ने कवशी शब्द की समता संस्कृत *कवचिका* और कवच से की है। लेख नं० ५०५ के *"कवशी १ पचेवर"* में बेली के अनुसार एक *कवचिका* का उल्लेख है[४]। कवच पुरुषों के उपयोग का, जो साधारण कोट अथवा उत्तरीय के रूप में था। स्टाईन ने इसे अन्दर पहिने जाने का वस्त्र बताया[५]।

लेख नं० १४९ "कट थवंने, ४ ओंन, थवने ३ रुपथे मन १ माश सहस्र २००० शत ५००० कंचुलि २ सोस्तनिं" में अन्य वस्तुओं की गणना में *कंचुलि* का नाम आया है। संस्कृत के

कंचुलि[६]

कंचुलिका और कंचुल शब्द का ही रूप कंचुलि है ऐसा अनुमान किया गया[७]। मध्यएशिया

१—कवशी—लेख नं० ५०५—"५ कवशी, १ पचेवर पिंड मिलिमा ३ चटग"

कवजी लेख नं० ५८१—"चिर ७ तीन मूली ववस्तग हस्त ६ कवजी १ पशु"

२—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८२

३—वेली, बी० एज० ओ० एस० भाग ११ पृष्ठ ७९९

४—वही, वही पृष्ठ ७९९

५—स्टाईन, सेरिन्डिया पृष्ठ ३७९

६—लेख नं० १४९, ३१८, ३४३

७—श्रीरतनचन्द्र अग्रवाल, टेक्सटाइल, पृष्ठ ८७

की चित्रकला भी स्त्रियों को *कंचुलिका* पहने हुए दिखाते हैं[1]। खरोष्ठी लेखों में तीन प्रकार की बनी हुई *कंचुलिका* का उल्लेख है :—

१—सफेद रेशम की बनी हुई *प्रिय कंचुलि*

२—पटुआ अथवा सन की बनी हुई *षनं पट कंचुलि*

३—ऊन की बनी कंचुलि[2]।

शुंग-युन ने भी खोतान के स्त्रियों की छोटी जाकिट का उल्लेख उनके पोशाक के वर्णन में किया[3]।

बरो के अनुसार कमरबन्द की भाँति *कयबंध* कमर पर बाँधने का कोई वस्त्र था[4]। स्टाईन को मीरान प्रदेश से रेशमी कपड़े का एक कमरबन्द मिला। स्टाईन के अनुसार मेखला या कटिसूत्र की तरह इस कयबध का व्यवहार चीनी-तुर्किस्तान में होता होगा[6]। श्रीरतनचन्द्र अग्रवाल ने कमर पर लपेटे जानेवाला कोई वस्त्र *कयबंध* था ऐसा अनुमान किया है।

कयबंध[5]

१—स्टाईन, सरिण्डिया, पृष्ठ ९१९,
एंशियंट खोतान पृष्ठ १७०

२—लेख नं० ३१८

३—स्टाईन, एंशियंट खोतान, पृष्ठ १७०

४—लेख नं० १४९—कंचुलि २ सोस्तंनि २ कयबंध चिंन चिमर ३

५—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ २७ लेख के कयवंध का अनुवाद वेल्ट किया

६—स्टाईन, सरिन्डिया, पृष्ठ ९३६-९३७

स्मृति चिह्न के रूप में एक चीन-वेड भेजे जाने का उल्लेख लेख नं० ३५३ में है। "मन सिकर प्रहित चीनवेड" बरो ने *चीन-वेड* का अनुवाद चीनी पगड़ी किया[१]।

चीन-वेड

वेली ने लेख नं० ७९४ के *चांद्री कमंत* और लेख नं० २७२ के *चंद्री कमंत* की व्याख्या की है। इसके अनुसार *चांद्री* हरानियम चादर शब्द से निकला है और इसके विशेषण की तरह है। *चांद्री कमंत* और *चंद्री कमंत* का अर्थ इन्होंने चादर के कपड़े के बने पाजामा से लिया[४] है। किन्तु बरो ने *चंद्री* शब्द की व्याख्या का एक और रूप दिया है। इन्होंने संस्कृत के *चान्द्रकम* अर्थात् अदरख मसालों से *चंद्री* का समीकरण किया[५]। प्रो० थामस ने लिखा "*चंद्री-कमंत, रोतम्, चुरोम*" २७२ भी राजा के द्वार पर रात और दिन शीघ्रता से संदेश लेकर भेजे गए। चंद्री कमंत की व्याख्या कठिन है। हो सकता है कि इसका अर्थ Jade निकालनेवालों से रहा हो।

चांद्री,[२] अथवा चंद्री[३]

१—रतनचन्द्र, टेक्सटाइल, पृष्ठ ८८

२—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ६८

३—लेख नं० ७१४—"थवस्तये रजी नभंतये चांद्री कमंत न अन्य मक ओगन"

४—लेख नं० २७२—"संगलिदग हुत चंद्रीकमंतरोतम चुरोम"

५—वेली, बी० एस० ओ० एस० भाग ११, पृष्ठ ७९३

लेखों में ६ राजाओं के नामों का उल्लेख है, जिसमें लेख नं० ६६१ *"खोतान महरय रयनिरस हिनभ्रस्स अविजिद सिंहस्य"* खोतान के राजा अविजित सिंह का उल्लेख करता है[1]। अन्य पाँच पेपिये, तजक, अंगोक, महिरि और वषमन राजाओं के नाम हैं और सभी देवपुत्र कहे गए हैं। संभवतः पाँचों राजा एक के बाद दूसरे गद्दी पर आए, किन्तु इनके परस्पर के संबंध में कुछ कहा नहीं जा सकता। राजा का पद आनुवंशिक था अथवा प्रजा द्वारा निर्वाचित था, इसका भी कोई संकेत नहीं मिलता। लेखों में किसी घटना अथवा किसी अन्य प्रसंग के उल्लेख में ही प्रायः काल के संकेत के लिए राजा का नाम लिया गया है। जैसे *"संवत्सरे ६ महरयतिरयस महतंस जयंतस धमियस सचधमस्तिदसनुश्रव महरय अङ्कुवग देवपुत्रस"*,[2] *"संवत्सरे २० मासे ४ दिवसे २२ महनुश्रव महरय जिटुघ अङ्गांक[3]।"*

राज्य शासन संभवतः नृपतंत्र था। राजा एक था, अधिकारी वर्ग भिन्न-भिन्न श्रेणियों में विभाजित थे, और सभी राजा के शासन के अन्तर्गत थे। राजा स्वयं अपने उच्च अधिकारियों की नियुक्ति करता था, और राजा का उन पर पूर्ण शासन था[4]।

१—खरोष्ठी इन्सक्रिपशन—भाग ३ पृष्ठ ३२३

२—लेख नं० ५८१

३—लेख नं० ५८२

४—लेख नं० २७२ चोझबो सोंजक राजा द्वारा नियुक्ति किया गया, जो शासन का मुख्य अधिकारी था। डी० सी० सरकार, सेलेक्ट इन्सक्रिपशन, पृष्ठ २३९ चोझबो प्रधान स्थानीय शासन अधिकारी का पद था।

प्रजा को संभवतः राजकीय कार्यों में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था। क्योंकि लेख नं० २७२ में राजा ने "*चोझबो सोंजक*" को राज्य का अधिकार देकर कहा कि प्रत्येक व्यक्ति राज्य संबंधी कार्यों में न पड़े "*न सर्वजनस्य रजकर्यंति कर्तवो*" किन्तु राजा का शासन निरंकुश था, इसके लिए कोई प्रमाण लेखों से नहीं मिलते। शासन पर किसी प्रकार का वैधानिक रोक हो, ऐसी किसी शक्तिशाली संस्था का उल्लेख चीनी तुर्किस्तान के खरोष्ठी लेख नहीं करते। साथ ही निरंकुश शासन के कारण शासन में जैसी अराजकता या अशांति फैलने की संभावना होती है, वैसी किसी प्रकार की अशांति की चर्चा लेखों में नहीं है। अतः यह कहना भी सत्य नहीं मालूम होता कि राजा के शासन में कोई वैधानिक या धार्मिक रोक नहीं था।

अधिकांश लेखों में *चोझबो सोंजक* को सम्बोधित किया गया है। लेखों के प्रसंगों से अनुमान होता है कि यह पद निश्चय ही अन्य राजकीय पदों की अपेक्षा श्रेष्ठ पद रहा होगा[1]। लेख नं० २७२ में राजा ने स्वयं कहा कि मैंने *चोझबो सोंजक* को राज्य का एकमात्र अधिकारी बनाया है। राज्य के कार्यों में प्रत्येक व्यक्ति का हाथ नहीं, अतः "*चोझबो सोंजक*" की आज्ञा की अवहेलना करने वाले राज्य की ओर से दंड के भागी होंगे[2]। यहाँ "*चोझबो सोंजक*" प्रदेश का एकमात्र अधिकारी

१—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ—९० डी० सी० सरकार, सेलेक्ट इन्सक्रिपशन, पृष्ठ २३९ एफ०डब्लू० थामस, अक्टा० ओ० भाग १२, पृष्ठ ४४।

२—लेख नं० २७२ "श्परस्य सुठ विः डेंडि एदे समृधए जंन वरिदए होतु म भविष्यदि रज्य स्थिष्यदि तं कल षोधेष्यंदि अवि च श्रुयदि यथ अत्र चोझबो-सोंजकेन अठीवये अज्ञते जंन सूठ अवोमत करेंदि तह न लंचग करेंदि एकिस्य एतस रज पचविदेमि।

राजा द्वारा नियुक्त किया गया। बरो ने यहाँ *एतस रज पिचविदेमि* के आधार पर बताया कि *चोझबो सोंजक* संभवतः उस प्रदेश का शासक था, जहाँ की राजधानी चडोटा नीया थी[१]। लेख नं० ३७१ में राजा ने पुनः *चोझबो सोंजक* की बातों की अवहेलना करने वालों को राज्य दंड की धमकी दी। इसमें कोई संदेह नहीं कि राजा के अन्य शासन अधिकारियों में "*चोझबो सोंजक*" का पद श्रेष्ठ था।[२]

चोझबो सोंजक पर राजा का पूर्ण अधिकार था। ऐसा लेख नं० २७२ से मालूम होता है। यहाँ राजा ने अधिकार के साथ *चोझबो सोंजक* से कहा कि जब मैंने राज्य के इन कामों को करने की आज्ञा दी है तो रात दिन एक कर के काम पूरा होना चाहिए। *चोझबो सोंजक* के कार्यों में राज्य की देख-रेख में प्रायः सभी कामों का समावेश था, ऐसा अनुमान होता है। राजा सब प्रकार की सूचना चोझबो सोंजक द्वारा पत्र में देना चाहता था। लेख नं० २७२ में राजा ने चोझबो सोंजक को राज्य के जिन-जिन कामों की आज्ञा दी है उनमें राज्य के प्रायः सभी विभागों के कार्य आ जाते हैं। सूचना विभाग की ओर से राजा खेमा और खोतान की विशेष-विशेष खबरें *चोझबो सोंजक* के पत्र से जानना चाहता था। राज्य की रक्षा के हेतु सैनिक-

---

१—बरो, लेंग्वेज, पृ० ९०।

२—प्रो० थामस, ऐक्टा० ओ० भाग १२ पृष्ठ ४४ प्रो० रैप्शन के मत को मानते हुए थामस ने बताया कि चोझयो सोंजक राजा अहिरि के शासन काल में था। इसकी चोझबो उपाधि तिब्बती "रत्से-जे" से सम्बन्धित है, जो स्थानीय कर्मचारियों में श्रेष्ठ अधिकारी को दिया जाता था, अथवा "को-ज्वो" अर्थात् प्रधान शासक के लिए भी कोझबो शब्द प्रयुक्त हुआ हो, ऐसी संभावना मालूम होती है।

प्रबन्ध और व्यापार सम्बन्धी बातों की चर्चा भी राजा *चोंझवो सोंजक* के साथ किया करता था[१]। राजा के शासन में *चोझवो सोंजक* के ही नाम लेखों में मिलते हैं, जिनके साथ राजा सलाहकार की भाँति कभी-कभी विचार-विमर्श करता हो, किन्तु इसमें भी छूट नहीं थी[२]।

लेख नं० ३०९ में राजा ने चोझवो सोंजक को कहा कि जब से तुम प्रदेश के शासक बनाए गए, तुम्हारे इस शासन अवधि में अनाज नहीं लाया गया। ....“*चोझवो सोंजक*” प्रदेश का अधिकारी, कोई विशेष व्यक्ति था अथवा यह इस पद का ही नाम था, इसका पता नहीं चलता, यद्यपि अधिकांश लेखों में राजा ने शासन सम्बन्धी सूचना के लिए *चोझवो सोंजक* को ही सम्बोधित किया है। राज्य के शासन के लिए शासन के कार्य विभिन्न विभागों में विभाजित थे, और प्रत्येक विभाग के उपर अधिकारियों की नियुक्ति की गई।

राज्य का संचालन कोष पर निर्भर है। समृद्ध कोष ही राज्य को सुखी बना सकता है। भारत के आचार्य कौटिल्य ने कोष की व्याख्या करते हुए कहा कि प्रचार समृद्धि, शस्य सम्पत् और पण्य बाहुल्य कोष के तीन साधन हैं[३]।

कोष विभाग

कोष के लिए खरोष्ठी लेखों में *गंनी* शब्द है[४]। *गंनी द्रंग* का अर्थ कोषालय, और *गन्यवर* का

१—लेख नं० २७२—

२—थामस, ऐक्टा० ओ० भाग १२ पृष्ठ ४४, राजा ने “चोझवो सोंजक” से विचार किया।
लेख नं० २७२—“महनुअव महरय लिहति चोझवो सोंजकस मंत्र देति एवं च जनंद भविदव्य”

३—कौटिल्य—अर्थशास्त्र

४—लेख नं० ३९७—

अर्थ डा० बरो के अनुसार कोष का अध्यक्ष है[१]। कर राज्य की आय का मुख्य साधन है। अतः कर की व्यवस्था सभी राज्यों में प्रायः राज्य की व्यवस्था के साथ ही कायम की गई। हिन्दू शास्त्रकारों ने कर को राजा का वेतन-स्वरूप माना है, जो राजा की उत्पत्ति के सहमति सिद्धान्त की शर्त पर स्वीकार की गई[२]। चीनी तुर्किस्तान के राज्यों में भी कर राज्य-शास्त्र का अभिन्न विषय माना गया। खरोष्ठी लेखों में कर के लिए कई शब्द प्रयुक्त किए गए हैं:—

बरो ने लिखा है कि *पल्पि* शब्द चीनी तुर्किस्तान में कर के लिए प्रचलित शब्द था, जो संभवतः स्थानीय भाषा के अन्तर्गत था। बरो ने पल्पि को पल्पि (कर) संस्कृत के

१—पल्पि

(बलि) कर शब्द से इसकी समता की[४]। बेली ने लेख नं० ७१४ और ७१३ में उल्लिखित *पल्पि* को *पलि* पढ़ा और इसका अनुवाद कर के अर्थ में किया[५]।

लेख नं० ५५९ "*यथ धमेन तक अंन प्रचेय निचे*" और लेख नं० ५७४ "परिदे वग अंन पुछिदवा" के *वक* या *वग* का अर्थ बरो

१—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ५०९

२—"बलिषष्ठेन दण्डेनाघापराधिनाम्
शास्त्रानीतेन लिप्तेपा वेतनेन धनागमम।

३—लेखनं० ४२ "पेत अवनमि संवतसरि पल्पि चिंदितग परुवर्षी पल्पि सुगनुतन"

४—बरो, जे० आर०ए०एस० १९३५ पृष्ठ ६७५
वही लैंग्वेज, पृ० १०४

५—बेली, बी० एस०ओ०एस० भाग ११पृ० ७९३

ने अनाज के उस भाग से लिया जो कर के रूप जमीन्दार को दिया जाता था[१]। डा० डी.सी. सरकार ने खरोष्ठी लेख के "*भूम न वक अंत*" की समता भूमि के नवजात शस्य से की, अर्थात् भूमि से उत्पन्न ताजा अनाज जो कर में दिया गया[२] उससे की।

२—वक

लेख नं० १६४ में इन तीनों शब्दों का उल्लेख है[३]। बरो के अनुसार *समरेन, त्संघीन* और *क्वेमंघीन* तीन प्रकार के कर थे।[४] लेख नं० २७२ *त्संघीन* और *क्वेनघीन* अनाज के अर्थ में प्रयुक्त है।[५] इस प्रसंग के अनुसार बरो ने *त्संघीन* का अर्थ कर में इकट्ठा किए गए किसी विशेष प्रकार के अनाज की संभावना बताई[६]।

३—समरेन, त्संघीन और क्वेमंघीन :

खरोष्ठी लेखों में पके प्रायः पार्सल या पेकिंग के अर्थ में आया है[७]। किन्तु लेख नं० १६४ के "*पगो पलिप किड*" मुहावरे

१—बरो, लैंग्वेज, पृ० ११७

२—डा० डी. सी. सरकार, सेलेक्ट इन्सक्रिपशन, १०४२, कलकत्ता, पृ० २४०

३—लेख नं० १६४ "अन्नं अदेहि रजदे समरेन त्संघीन क्वेमंघीनन"

४—बरो, ट्रान्शलेशन पृ० ३२, लेख न० १६४ का नोट

५—लेख न० २७२ "यथ अत्र यत्न पकुंतेन कुवन त्संगिन कोयिमधीन-सर्वत्र नगर-द्रंगेषु अन्नै।

६—बरो, लैंग्वेज, पृ० ९६

७—रतन चन्द्र अग्रवाल फोर्म आफ टैक्सेशन एज डेपिक्टैड इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट आई० एच० क्यू० २९–१९५३ पृष्ठ ४०-५३

और—ए० स्टडी आफ वेट एन्ड मेजर इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान जे०वी०आर०एस० ३८ पृ० ३६९

बरो, लैंग्वेज, पृ० १०२

से बरो ने इसे एक प्रकार का कर बताने की

४—पके चेष्टा की[1]। और यदि पके को साधारण अर्थ पार्सल के अर्थ में लें और लेख के "*पगो पके पल्पि किड*" करें, तो डा० बरों के शब्द में इसका अनुवाद "पगो ने कर की पेकिंग की" होगा।[2]

खरोष्ठी लेख विभिन्न नाप के तवस्तग का वर्णन देता है। लेख नं० ४३१, १३ हाथ लम्बे कालीन तवस्तग का और लेख नं० ५७८, आठ हाथ लम्बे कालीन का उल्लेख देता है।

खरोष्ठी लेख नयंतग, नमतग, नमद्ग, नमंतये

नमत का उल्लेख करते हैं[3] जिसकी समता बरो ने उत्तरी परसियन भाषा के नमद शब्द से की[4] है। *नमद* कम्बल अथवा नमदा के अर्थ में प्रयुक्त है।

वस्त्र और कपड़ों के लिए व्यवहार किए गए साधनों में ऊन, सन, पटुआ, रेशम, कपास, रूई और चमड़ा का उल्लेख खरोष्ठी लेखों में है। कालीन कम्बल, रजाई और

साधन अन्य ऊनी वस्त्रों के लिए ऊन की आवश्यकता होती थी। लेख नं० ३४५ में ऊन ऊर्नवरंडे, और ओंन नं ३१८ का उल्लेख है।

लेख में उद्धृत शंनं नं० ३१८ की समता उत्तरी परशियन

१—बरो, ट्रान्सलेशन पृ० ३२

२—बरो, ट्रान्सलेशन पृ० ३२, लख नम्बर १६४ का नोट :—

३—क्रमश लेख नं० ७२८, ६३४, ७१४

४—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ १००

भाषा के *शन* पटुवा[1] संस्कृत *शण*,[2] और हिन्दी *सन* से की जा सकती है[3]। लेख नं० ३१८ का *षंनपट* हिन्दी का *सनपट* है[4] जिससे कंचुलि तैयार हुई।

रेशम के कई प्रकार का उल्लेख लेखों से मिलता है :—

विभिन्न लेखों में *पट* का उल्लेख है। बरो ने *पट* की समता पट्ट अर्थात् रेशमी कपड़े का थान (roll of silk) से किया[5] है।

पट या पट्ट

बरो की इस व्याख्या का समर्थन डा० लूडरस ने भी किया[6]। किन्तु एफ० डब्लू० थामस ने *पट* मलमल के कपड़े के लिए प्रयुक्त हुआ शब्द बताया। इनके अनुसार *पट* कोई मूल्यवान् वस्तु है[7]।

लोगों को वैज्ञानिक ज्ञान और सौन्दर्य-कला का सुन्दर ज्ञान कपड़े की धुलाई और रंगाई से मालूम होता है। लेखों में

१—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ७८७

२—मोनियर विलियम, संस्कृत इंगलिश डिक्शनरी, आक्सफोर्ड, पृष्ठ १०४८।

३—देखिए, रतनचन्द्र अग्रवाल टेक्सटाइल, पृष्ठ ७६

४—लेख नं० ३१८—"कुवन प्रहुनि षंन पट महकंचुलि"

५—बरो, लैंग्वेज पृष्ठ १०२ और ट्रान्सलेशन।

६—डा० लूडरस, टेक्सटाइलेन इम अलतेन तुर्किस्तान, ए० पी० ए० डब्लू० १९३६ पृष्ठ २४—इनका उल्लेख बरो ने लैंग्वेज, पृष्ठ १०२ में किया।

७—एफ० डब्लू० थामस, बी० एस० ओ० एस० भाग ११, पृष्ठ ५४६ और वही अेक्टा० ओ० भाग १२, पृष्ठ ६२-५

वर्ण शब्द के उल्लेख[१] से रंग-भेद का अनुमान होता है[२]। बेली ने खरोष्ठी *बार्रा* (Bārraa) का अर्थ रंगने वाला वर्नक बताया। वास्तव में चीनी तुर्किस्तान के लोगों के लिए वर्ण-भेद अर्थात् कपड़े की रगाई और छपाई का ज्ञान, उस काल में उनके बौद्धिक विकास का संकेत है। रंगों में निम्नलिखित रंगों के नाम हैं:—

१ *श्वेत—स्पेत*[३] *स्पेदग*[४] और *शिपति*[५] खरोष्ठी लेख के तीनों शब्द *श्वेत* रंग के लिए प्रयुक्त है।

२- *पंदुर*—लेख नं० ६६० के पंदुर की व्याख्या बेली ने संस्कृत शब्द पांडुर से किया, जिसका अर्थ सफेद या पीला है[६]।

३—*पीत*—*"ल्पोक्म न पेत वंनिदग कुवन"*[७]। लेख का पेत शब्द संस्कृत का पीत शब्द है[८]। लेख नं० ६०६ में उल्लिखित कशर[९] बौद्ध भिक्षु के चीवर, पीतवस्त्र के लिए प्रयुक्त है।

१—लेख नं० ३०८ खरवर्न प्रहुनि सुजि न किर्त
    लेख नं० ६६० बंघितग पलगवर्न

२—बेली, बी० एस० ओ० एस भाग ११ पृष्ठ ७८२

३—लेख नं० ३१८

४—लेख नं० ४३१

५—लेख नं० ८३

६—बेली, बी० एस० ओ० एस० भाग ११, पृष्ठ ७८१

७—लेख नं० ३१८

८—बरो, ट्रान्सलेसन, पृष्ठ ५९।

९—लेख नं० ६०६ श्रमंन अयिल विञवेति यथ एदस त्रि चदिसवे मंम कषर दहित यहि

"कशर" का मूल संस्कृत कषाय है[१] ।

नीला

लेख नं० ३१८ का "*नीलरतग*" नीले रंग का उल्लेख है[२] ।

आभूषण

आभूषण साधारण, सभ्य अथवा असभ्य सभी समाज में किसी न किसी रूप में व्यवहार में लाई गई वस्तु है। चीनी तुर्किस्तान के समाज में भी आभूषण का व्यवहार था, जो थोड़े उल्लेखन लेखों में प्राप्त हैं, उनसे ज्ञात होता है।

कर्णशोभन

स्टाईन ने चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों की खुदाई से प्राप्त सामग्रियों की जो सूची दी है[३] उसमें वहाँ से प्राप्त कुछ आभूषणों के भी नाम हैं-नीया के पास के प्रदेशों से अन्य सामग्रियों के मध्य सोने का एक छोटा आभूषण मिला, जो कर्णशोभन के सदृश है। यह सोने के एक पतले चादर का बना है और बीच में लाह जैसी धातु से भरा है, जिसमें एक छोटा सा हीरा जड़ा है[४]। इसी प्रकार का एक और सोने का ही कर्णशोभन प्राप्त हुआ[५]। रवाक (Rawak) प्रदेश से भी स्टाईन को स्वर्णकर्णशोभन मिला। यह

१—मोनियर विलियम, संस्कृत डिक्शनरी, उपृष्ठ २६९ बेली,

बी० एस० ओ० एस० भाग १३ पृष्ठ ३८९

रतनचन्द्र अग्रवाल, टैक्सटाईल पृष्ठ ७९

२—रतनचन्द्र अग्रवाल, टैक्सटाइल पृष्ठ ७१

३—देखिए, एशियंट खोतान, पृष्ठ ३८१ ।

४—वही वही ,, वही

५—देखिए, ,, पृष्ठ ४१९ ।

गोल आकार का है, जिसमें दो मोतियाँ जड़ी हैं। कला की दृष्टि से यह उच्च श्रेणी का है। हाथ के काम की सफाई स्पष्ट है[१]।

खरोष्ठी लेख नं० ५६६ में खोई हुई वस्तुओं के नाम हैं, जिनमें *सूडी* (Sudi) कर्णबंधन का उल्लेख है[२]। बरो के अनुसार *सूडी* कान में पहिनने का कोई आभूषण था[३]।

गले का हार—लेख नं० ११३ के अनुसार एक सोने के गले का हार और दो *अर्नवजी* की बिक्री के मूल्य लेकर की गई[४]। स्टाईन ने मोतियों के हार का वर्णन किया है[५]। खरोष्ठी लेख नं० ५६६ "मूतीलत" का उल्लेख करता है। "मुतीलत" मोतियों के हार के लिए प्रयुक्त है[६]। स्टाईन को चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों की खुदाई से विभिन्न प्रकार की मोतियाँ (Beads) प्राप्त हुई हैं, जिनमें कई हरे और अच्छे पत्थर के हीरा सदृश थे[७]।

सोने और हीरों के अतिरिक्त अन्य धातुओं का व्यवहार भी उल्लेखनीय है, जिन्हें आभूषण के काम में लाया जाता था।

१—देखिए, एशियंट खोतान, पृष्ठ ४०६।

२—लेख नं० ५६६—"तिछतमअए च विंनवेति यथ एदष नठ मुती लत ७ अदर्श १ चित्र पट मए लस्तुग १ सुडि कर्णबंधन त्संगिन····

३—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ११२।

४—लेख नं० ११३—देशंनये चंल्पित एद····गेन अत्र स्वर्ण अर १ अथवा अर्नवजि २

"अर्नवजी", का अर्थ बरो, के अनुसार एक प्रकार का कपड़ा था, देखिए, बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ७७।

५—देखिए, स्टाईन, एशियंट खोतान, पृष्ठ ४१६।

६—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ११२

७—देखिए, स्टाईन, एशियंट खोतान, पृष्ठ ३८१-४१६।

स्टाईन ने कांसे के आभूषण का वर्णन किया है। इन्हें दो कांसे की अंगूठियाँ प्राप्त हुईं।[1] बैल के सिंघ के आकार का एक चंद्राकार काँसे की वस्तु प्राप्त हुई जो संभवतः किसी आभूषण के रूप में होगी[2]।

चीनी तुर्किस्तान की सामाजिक व्यवस्था, उनका पारिवारिक जीवन, धर्म और व्यवसाय से वहाँ के लोगों के रहन-सहन का एक साधारण स्तर मालूम होता है। ह्वेन-त्सांग ने खोतान के विवरण में लिखा है कि यहाँ के निवासी स्वभाव से मधुर और आदरणीय थे, साहित्य का अध्ययन उन्हें पसन्द था। लोग सरल प्रकृति के थे और आनन्द के साथ अपनी स्थिति में संतुष्ट थे[3]। पुनः दूसरे स्थल पर ह्वेन-त्सांग ने खोतान के लोगों की न्यायप्रियता और उनके तर्कशील विचार का उल्लेख किया है। लोगों के चेहरे पर नागरिकता एवं शिष्टता का चिह्न था[4]।

संस्कार की दृष्टि से चीनी तुर्किस्तान के लोग उस काल में भी शिष्ट थे। खरोष्ठी लेखों की पत्र—शैली उनकी सहज विनम्रता की सूचक है, जिनसे माता पिता के प्रति आदर एवं भक्ति, राजा के प्रति सम्मान (महानुभव महरय, देवानां प्रिय) और धर्म के प्रति निष्ठा की झलक मिलती है। फा-शीन, ४०० ई० में जब खोतान पहुँचा था, तो उसने वहाँ की उस समय की स्थिति का वर्णन करते हुए बताया कि "बौद्ध धर्म वहाँ खूब फल-फूल

१—देखिए, स्टाईन, वही पृष्ठ ४१४

२—देखिए, वही, वही पृष्ठ ४१६

३—देखिए, वही, वही पृष्ठ १३९

४—देखिए, एशियंट खोतान, पृष्ठ १७४

रहा था।" उन्होंने लिखा "यह बड़ा सुखी और समृद्ध राज्य है। गाँव, घने बसे और खुशहाल हैं। लोग हमारे धर्म के अनुयायी हैं और बड़ी प्रसन्नता से धार्मिक गीतों में शामिल होते हैं[1]। इन प्रदेशों के मकान प्रायः लकड़ी के होते थे। कई लकड़ी के स्तंभ प्राप्त हुए हैं जिनकी बनावट लोगों के कला का प्रतीक है[2]।

समाज में व्यक्तिगत विशेषता के कारण सभी प्रकार के लोगों का समावेश था। चोरी का उल्लेख लेख के कई प्रसंगों से मिलता है[3]। प्रायः धन, सम्पत्ति में अनाज, घी और दैनिक व्यवहार की वस्तुएँ चोरी जाती थीं। घर के दास-अथवा अनुचर कभी-कभी चोर हुआ करते थे। अनाचार और अशिष्टता का भी उल्लेख है। लेख नं० ३३९ के अनुसार "णेन" ने अपने पिता का हाथ पैर बाँधकर पीटा[4] था। अनधिकार चेष्टा के कई उदाहरण लेखों से मिलते हैं। दूसरे की भूमि से वृक्ष काट लेने का जुर्म लेख नं० ४८२ से ज्ञात है। किन्तु इन सब के बावजूद शांति और सुव्यवस्था के लिए लोगों ने विधान की रचना की[5]। राष्ट्र के एक नागरिक के नाते लोगों में कर्तव्य और अधिकार की विवेचना का ज्ञान था। लोगों में संगठन था। उनके पारस्परिक व्यवहार का एक उदाहरण लेख नं० १६१ की पंक्ति—"यदि तुम मेरे लिए इतना कर सको तो मैं तुम्हारे लिए कुछ इसके प्रतिदान में कर सकता हूँ, जब भी तुम्हारे

१—देखिए, राहुल सांस्कृत्यायन, बौद्ध संस्कृति, पृष्ठ २४०

२—स्टाईन, सैरिन्डिया

३—लेख नं० १३, १९, १७, ६२।

४—लेख नं० ३३९।

५—देखिए, राज्य और समाज अध्याय ८ में

कोई व्यक्ति भविष्य में इस ओर आयेंगे मैं उन्हें अपने व्यक्तियों की भाँति देखूँगा[1]—'' से होता है। इस प्रसंग से उनके परोपकार का और साथ ही उनके स्पष्टवादिता का परिचय मिलता है।

खरोष्ठी लेखों से चीनी तुर्किस्तान के लोगों का मुख्य आहार क्या था, ज्ञात नहीं होता, किन्तु कृषि में गेहूँ, चावल, जौ की उपज का उल्लेख है, जिसकी खेती वहाँ के कृषक बड़ी सावधानी से करते थे[2]। यद्यपि यह ज्ञात होता नहीं कि गेहूं, और चावल को किस रूप में तैयार कर वे लोग भोजन के योग्य बनाते थे, किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं मालूम होता कि उनके भजोन में इन अनाजों का स्थान प्रधान होता होगा। साथ ही पारिश्रमिकों एवं दासों को पचेवर और चोडग उनके वेतन स्वरूप दिए जाने का उल्लेख है[3]। पचेवर भोजन के लिए और चोडग वस्त्र के लिए व्यवहार में आया है। पचेवर में क्या दिया गया इसकी चर्चा लेखों में नहीं है।

आहार

इन अनाजों के अतिरिक्त फल की खेती का भी उल्लेख है। अंगूर के खेत का उल्लेख विभिन्न लेखों में है। अतः भोजन में फल का अंश भी रहता होगा।

खरोष्ठी लेख नं० १ से ज्ञात होता है कि गाय का मांस वहां के लोगों के आहार का भाग था। संभवतः गाय का मांस लोग पसन्द से खाया करते थे, क्यों कि लेख नं० ६७६ में एक ६ वर्ष

१—लेख नं० १६१।

२—देखिए, व्यवसाय अध्याय ९ में

३—लेख नं० १९—राजधर्मेन चोडग पचेवर परिक्रय ददबो

के गाय को चुरा कर खाने की चर्चा करते हैं। भोजन के लिए गौ के अतिरिक्त अन्य पशुओं के नाम खरोष्ठी लेखों में नहीं मिलते।

खरोष्ठी लेख और चीनी तुर्किस्तान से प्राप्त सामग्रियों में बरतन, जूता, शीशा आदि का उल्लेख है। इनमें खरोष्ठी लेख जूता का उल्लेख करता है। लेख नं० ४३२ में उल्लिखित *कवजीनमत* से नमदा के बने जूते का परिचय प्राप्त है। कबशी[1] और उत्तरी परशियन भाषा के *काफ़्स* शब्द का अर्थ जूता या चप्पल है। स्टाईन ने भी उस काल के जूते का वर्णन किया है जिसमें सन का फीता बंधा था[2]। मध्य एशिया के बड़े लम्बे जूते प्राचीन काल में प्रसिद्ध थे। घुड़सवारी के लिए लम्बे जूतों की आवश्यकता होती थी। श्री मेकगर्वन के अनुसार इस प्रकार के जूतों का मूलस्थान मध्यएशिया था[3]।

साज शृंगार की वस्तुओं में ऐने शामिल थे। चौकोर शीशा जो कांसे में विठाया है, स्टाईन को नीया के पास के प्रदेशों से प्राप्त हुआ। कार्य-कौशल की दृष्टि से यह चीनी बनावट है[4]।

इन वस्तुओं से चीनी तुर्किस्तान के रहन-सहन का आभास मिलता है। शरीर की रक्षा एवं सौन्दर्य की पहचान से वहां के लोग अनभिज्ञ नहीं थे। सभ्यता और संस्कृति का स्तर अन्य देशों की अपेक्षा कम नहीं था। भारत और चीन की सभ्यता का संगम होने के नाते यहां के लोग संसार के मध्य अपना स्थान भी एक समझते थे।

१—फान-यू-त्स-भिग का, श्री तवादिश द्वारा उल्लिखित प्रसंग का उल्लेख श्री रतन चन्द्र अग्रवाल ने किया। "टैक्सटाइल" पृष्ठ ८१।

२—स्टाईन, एशियंट खोतान, पृष्ठ २१७।

३—मकगर्वन, अर्ली इम्पायर आफ सेन्ट्रल एशिया, पृष्ठ २६२।

४—स्टाइन, एशियंट खोतान, पृष्ठ ३८१।

सातवाँ अध्याय

राज्य और समाज

राज्य और समाज दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। समाज के सहयोग से राज्य के कार्य समाज के लिए उपयोगी होते हैं, और राज्य की सुव्यवस्था से समाज की उन्नति संभव है।

चीनी तुर्किस्तान के खरोष्ठी लेख सुव्यवस्थित राज्य का उल्लेख करते हैं। राज्यशास्त्र के आधारभूत नियमों के अनुसार राजा राज्य का प्रधान अंग माना जाता था[1]। राज्य की सप्त प्रकृतियों के कार्य भी हिन्दू शास्त्रकारों द्वारा प्रतिपादित नियमों के अनुसार चलते थे। स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड और मित्र इन सातों के अस्तित्व का अनुमान राजसंबंधी प्रसंगों से मालूम होता है[2]।

चीनी तुर्किस्तान के समाज में भी राजा का पद श्रेष्ठ था। प्रजा राजा की सत्ता स्वीकार करती थी और उसे देवपुत्र मानती थी। खरोष्ठी लेखों[3] में जहां कहीं भी राजा का उल्लेख है, वहां राजा को देवपुत्र के विभिन्न विशेषणों के साथ ही सम्बोधित किया गया है। उदाहरण के लिए "*महरजस*

१—कौटिल्य, अर्थशास्त्र— "राजा राज्यमिति प्रकृति संक्षेपः"

२—वही "स्वाभ्यमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड मित्राणि प्रकृतयः

३—चीनी तुर्किस्तान के खरोष्ठी लेख

रजतिरज महनुअत्र रजदेवपुत्रस राजा तजक के विशेषण थे[1]। *"महनुअव महरय जिदुघ मिहिरि देवपुत्रस"* राजा महिरि[2] *महनुअव महरय जिटुघ अंगोक देवपुत्रस'* राजा अंगुवक के लिए प्रयुक्त थे।

कुषाण राजाओं ने भी देवपुत्र की उपाधि ली थी। कुषाण वंश के राजाओं ने, जिनका ऐतिहासिक महत्व पूर्वी वैक्ट्रिया या वदक्षान से आरंभ होता है, देवपुत्र का विशेषण संभवतः स्थानीय परम्परा से लिया हो, ऐसा अनुमान किया गया[4]। भारत के कुषाण वंशीय राजाओं के लेखों में *"महरजस्य रजतिरजस्य देवपुत्रस्य कनिष्कस्य संवत्सरे"* कनिष्क प्रथम के सुई विहार लेख में कनिष्क की उपाधि का उल्लेख है[5]। वाशिष्क और हुविष्क कुषाण राजाओं ने भी देवपुत्र की यह उपाधि ली थी[6]। साधारणतः विद्वान् यह समझते हैं कि कुषाणों ने देवपुत्र की भावना चीन से ग्रहण की। लेकिन सिल्वां लेवी ने इस मत का विरोध करते हुए कहा कि देवपुत्र की भावना चीनी "ती-येन-शु" के समान नहीं है और ऐसा मालूम पड़ता है कि यह भावना कुशाणों ने मध्य एशिया से लिया होगा[7]। राजा में देवत्व की भावना भारत, चीन, यूरोप आदि देशों में भी

१—लेख नं० ४२२

२—लेख नं० ५००

३—लेख नं० ५७२

४—डा० ए० के नारायण, "द इन्डो ग्रीकस्" पृष्ठ ५०

५—डी० सी० सरकार, सेलेक्ट इन्सक्रिपशन, पृ०ष्ठ १३५

६—वही वही पृष्ठ १४४, १४८

७—डा० ए० के० नारायण, द इन्डो ग्रीकस् पृष्ठ

मान्य थी। यूरोप में राजा के देवत्व का सिद्धान्त मुख्यतः निरंकुश राजसत्ता के समर्थन के लिए ही प्रतिपादित किया गया था। किन्तु भारत में राजा को देव कह कर उसके कर्तव्य और अधिकार में इतनी छूट नहीं दी गई जितनी पाश्चात्य देशों के लोगों ने दी। कहा नहीं जा सकता चीनी तुर्किस्तान के लोगों ने राजा को देवपुत्र कह कर राजा को देव माना अथवा राजपद को। प्राप्त खरोष्ठी लेखों में कहीं भी राजा के तिरस्कार या राजा के अत्याचार की विवेचना प्रजा द्वारा की गई नहीं मालूम होती और न राजा के किसी अन्याय का ही उल्लेख हमें मिलता है जिसके कारण राजा को राजपद से च्युत करने की आवश्यकता हुई हो। खरोष्ठी लेखों से राजा की कर्तव्य-परायणता और देश प्रेम का ही संकेत मिलता है।

चीन-चिमर

लेख नं० १४९ अन्य वस्त्रों के मध्य *चीन चिमर* का उल्लेख करता है। यह एक चीनी-लवादा का संकेत है[३]। संस्कृत में *चीमी* एक पौधे का नाम है, जिसके रेशे से कपड़ा तैयार किया जाता था[४]।

१—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८९

२—प्रो० थामस, ऐक्टा, ओ० भाग १२ पृष्ठ ४२-४६ थामस ने लेख नं० २७२ के सम्पूर्ण लेख की व्याख्या की। चंद्रीकमंत-रोतम और चुरोम शब्द की व्याख्या कठिन है। "चंद्री कमंत" की व्याख्या थामस ने चांद्री से चाँदनी और कमंत से करमान्त से काम करने वाले समझा। इस तरह उन्होंने सांकेतिक अर्थ लगाया, चाँदनी रात में नदी से Jade निकालने का कार्य या कार्य करने वाले।

३—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ २७

४—मोनियर विलियम, संस्कृत डिक्शनरी पृष्ठ ३९८

बरो ने *चिमर* को बौद्ध भिक्षुओं के चीवर से मिलाया था[१]।

लेख नं० ३५७ में कर्चीं-कमुत का उल्लेख है। बेली के व्याख्या के अनुसार कर्ची फरकोट के लिए प्रयुक्त किया गया है अथवा *कर्चीं-कमुत* का अर्थ कर्ची का बना पाजामा कहा[२]।

कची

किन्तु डा० जे सी० तवादिया ने यूरोप और एशिया की भाषाओं में *अवेस्तन कर्ची* का व्यवहार भिन्न-भिन्न भाषाओं में दिखाया। अतः श्री तवादिया का कहना है कि नीया के खरोष्ठी लेखों[३] में *कर्ची*, कुरता अथवा कमीज के अर्थ में व्यवहार किया गया है[४]। *कर्ची-कमुत चंद्री कमंत*[५] की भाँति शरीर के उत्तरीय भाग के वस्त्र मालूम होते हैं।

लेख नं० ७१४ कालीन, गलीचा, कम्बल आदि के साथ कमंत का उल्लेख करता है। कमंत की समता बेली ने खोतानी भाषा *कौमदई*, कामंद से किया। बेली के अनुसार सुथंना का

---

१ — बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ८ पृष्ठ ४२७ "चीमर अथवा चीवर"

२—बेली, बी० एस० ओ० एस० भाग ११ पृष्ठ ७१४

३—खरोष्ठी इन्सक्रिपशन फाउन्ड इन निया

४—डा० जे० सी० तवादिया, इण्डो इरानियन स्टडिज १९५० विश्व-भारती पृष्ठ ८०-८१

५—देखिये, बेली का मत, पीछे पृष्ठ ८७

खोतानी संस्कृत अनुवाद *कौमदई* है[1]। डा०

कमंत — लूडरस् ने *कमुंत* की समता *कमंत* से की[2]।

प्रो० थामस ने "कमुंत" को "शमुंत" समझना अधिक उचित समझा और इसे कोई बुना हुआ वस्त्र बताया[3]। इसे वैदिक *शामूल*, *शामूल्य* जो वधू के लिए विशेष रूप से बुना हुआ वस्त्र होता था। उससे समता की जा सकती है[4]।

ओ० स्टाईन ने कहा खरोष्ठी पुछम की समता संस्कृत के *पुत्तम* से की जा सकती है, जो कि अज्ञात है। *पुछम* संभवतः *पोन्सुर* है जिसे काश्मीर के लोग रात के पहिनने के लिए

पुच्छम[5]— लम्बा लबादा के पहनावा के रूप में पहनते थे। *पोत्सु* उस सूती कपड़े का नाम था, जिससे यह रात के पहिनने का वस्त्र तैयार होता था[6]। चीनी तुर्किस्तान के लोगों ने काश्मीर के लोगों से यह पहनावा अपनाया हो, ऐसा संभव है[7]।

१—बेली, बी० एस० ओ० एस० भाग ९ पृष्ठ ७९३

२—डा० लुडर्स, टेक्सटालेन इं अल्तेन तुर्किस्तान, ए० पी० ए० डब्लू० १९३६, पृष्ठ २४

३—थामस, ऐक्टा० ओ० भाग १२, ४३ पृष्ठ ७८-७९

४—रतनचन्द्र अग्रवाल, टैक्सटाइल पृष्ठ ८८, का उल्लेख

५—लेख नं० ९३४—"योमहि थवितग हुअति गुमोच ३ पुछम १ थवंन भये..."

६—ओ० स्टाईन, बी० एस० ओ० एस० भाग ८ पृष्ठ ७७७ नोट ९

७—खोतान का इतिहास तक्षशिला उपनिवेशों द्वारा स्थित प्रदेश का विवरण देता है, देखिए, स्टाईन, एशियंट खोतान,

धंनु कड वषे ४ कतग २ पोथी एकवर ८ कोजव—१[1] वस्तुओं की इस सूची में पोथीएकवर का अर्थ ओ० स्टाईन ने कपड़े के एक टुकड़े का बना वस्त्र बताया[2]।

पोथी एकवर—

बरो[4] ने लेख नं० ४३१-२ के सडी शब्द को रजी[5] रजाई के अर्थ में लिया। किन्तु बेली ने लेख के सडी शब्द की समता हिन्दी साडी, संस्कृत शाट, शाटक, शाटिका स्त्रियों के पहिनने के वस्त्र से किया[6]।

सडी या रदी[3]—

पहिनने के इन वस्त्रों के अतिरिक्त भी अन्य कई वस्तु हैं, जो हस्त कौशल की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

लेख नं० ५६६ के "*चित्रपटमये लस्तुग*" का अनुवाद बरो ने बहुरंगों का रेशम बना *लस्तुंग से* किया[7]। लेख नं० १८४ और नं० २८८ उपहार में *लस्तुग* दिए जाने का उल्लेख करते हैं[8]। बरो ने *लस्तुग* की व्याख्या उत्तरी परशियन *दस्तार* के

१—लेख नं० ५३४—

२—ओ० स्टाईन, बी० एस० ओ० एस० भाग ८ पृष्ठ ७७८ और बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ १८६

३—लेख नं० ४३१—"नमदग ४ रडी सटी अंजल इश देवी"

४—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ८८

५—"रजी" लेख नं० ७१४—रजी-रजाई

६—बेली, बी० एस० ओ० एस० भाग १३ पृष्ठ ३८९—

७—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ११२।

८—लेख नं० १८४—"कुन्जशति प्रहोडर्थय न तिमिदवो-देमि लहु मनसिगर मत्र लस्तुग

अर्थ में किया। (तौलिया, रुमाल, आदि[१])। डी० सी० सरकार की व्याख्या के अनुसार *लस्तुग* का अर्थ रस्सी या जूता का फीता हो सकता है[२]। थामस का कहना है कि *लस्तुग* का कोई निश्चित अर्थ नहीं मालूम है संभवतः यह दुशाला होगा—क्योंकि यह एक स्त्री के द्वारा भेंट दिया गया और कालीन की भांति इसका माप लिया गया,[३] या यह किसी एक विशेष प्रकार का चित्रित कपड़ा होगा। *चित्रपटमये लस्तुग*[४]

कजहवंनग[५]

कालीन के साथ *कजहवंनग* का नाप बताया गया। अतः इससे अनुमान होता है कि *कजहवंनग* मेज-पोश या कोई कालीन होगा[६]।

कम्बल

स्टाइन को कई प्रचीन लोई प्राप्त हुए हैं, जिनमें स्वस्तिक और स्तूप के चित्र बने हैं[७]। खोतान के साहित्य भारत के कम्बल का उल्लेख करते हैं, किन्तु नीया खरोष्ठी लेख में कम्बल का उल्लेख न होकर लोई के निम्नलिखित प्रकार हैं:—

कोजव अथवा *कोशेय* का उल्लेख खरोष्ठी लेखों में है[८]।

१—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ७८६।

२—डी० सी० सरकार, सेलेक्ट इन्सक्रिपशन, पृष्ठ २४३ नोट–२

३—लेख नं० ७२८—

४—थामस ऐक्टा ओ० भाग १२ पृष्ठ ६६ नोट ११।

५—लेख नं० ५८३— पंगस च परिदे दिंदंति कजह वंनग हस्त २ तावस्तग[११]

६—रतनचन्द्र अग्रवाल, डेक्सटाइल, पृष्ठ ८३

७—स्टाइन, एंशियन्ट खोतान, पृष्ठ ३३४

८—लेख नं० ५८३, ५९६, ५४९, अलेन कोजव

थामस ने *श्वोतंनि कोजव*[1] का अर्थ खोतान के रेशमी कपड़े से बताया[2]। ओ० स्टाईन ने *कोजव* की व्याख्या

कोजव

संस्कृत *कौशेय* से किया[3]। किन्तु बेली ने ऊनी चादर (woollen cover) के अर्थ में कोजव का व्यवहार खरोष्ठी लेखों में बताया[4]। पालि साहित्य में *कोजव* का विवरण *दीघ लोमको महाकोजवो* के रूप में किया गया है[5]।

खरोष्ठी लेख नं० ४३२ *स्पेदग कोजव* अर्थात् *श्वेत कोजव* का उल्लेख करता है।

अवले[6]

कोजवो के साथ ही प्राय: अवले का व्यवहार है[7]। बरो के अनुसार *कोजव* की ही भाँति *अवले* कोई वस्तु है[8]।

रजी—लेख नं० ७९४ कर में दिए गए वस्तुओं के अन्तर्गत *रजी* का उल्लेख करता है। *रजी* रजाई के अर्थ में व्यवहार किया गया है, ऐसा अनुमान होता है[9]। पुनः दूसरे स्थल पर

१—लेख नं० ५८३

२—थामस, ऐक्टा ओ० भाग १२, पृष्ठ ५४

३—ओ० स्टाईन, बी० एस० ओ० एस० भाग ८, पृष्ठ ७७८, नोट २।

४—बेली, बी० एस० ओ० एस० भाग ९ पृष्ठ ७९३

५—रायडेविड, पाली डिक्शनरी, पृष्ठ ५५

बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८४

६—लेख नं० ४३९–२, ५७५ १ कोशव, १ नमत, १ अवलिक

७—लेख नं ४३९–२

८—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ २८, १५४ लेख का नोट

९—रतनचन्द्र अग्रवाल, टेक्सटाइल, पृष्ठ ८३

भूमि के मूल्य में एक ऊँट और दो *रजी अमिल* दिया गया[१]।

प्रो० थामस के अनुसार तवस्तग एक इरानियन शब्द है, जिसका अर्थ कालीन है[२]। बरो, ने भी शब्द की उत्पत्ति इरानियन भाषा से मान कर इसका अर्थ कालीन बताया[३]। इन्होंने तवस्तग की समता तपस्त और तपस्तक = चटाई उत्तरी परशियन तवस्तह् किनारा या झालर वाला कालीन से किया[४]। बेली ने भी तवस्तह् की समता की[५]।

तवस्तग[४]

लेख नं० ३९९ के *शुक मुली* का ठीक अर्थ मालूम नहीं होता। डा० बरो ने कहा कि यदि शुक की समता संस्कृत के शुल्क से करें तो इसका अर्थ कर या मूल्य हो सकता है, किन्तु लेखों में कर के लिए अधिक *पल्यि* शब्द ही प्रयुक्त है। शुक का इस अर्थ में और कहीं व्यवहार नहीं है। अतः इसे कर के अर्थ में लेना ठीक नहीं[६]।

१—शुक

हर्ग[७] शब्द का भी संभवतः कर के अर्थ में उल्लेख किया गया

१—लेख नं० ४३१–२, ६२७, ६३४, ५७८, ५७९, ५९०, ६२२, ७१४

२—खरोष्ठी इन्सक्रिपशन, भाग ३ पृष्ठ ३४८

३—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ५१२

४—वही, लैंग्वेज पृष्ठ ९४

लेख नं० ४३१–सुवर्ण नवस्ति हुअति तस भगेन तवस्तग त्रोदश हस्त दितम

लेख नं० ५७८–प्रियवगेन दित स्त्रिये प्रतिग्रहुड प्रियवगस सुगुत दित तवस्तग हस्त ४४ उदिश

५—बेली, बी० एस० ओ० एस०, भाग ११ पृष्ठ

६—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ५६, ले नं० ३०९ का नोटः—

७—लेख नं० २०६—"मसु यं च अन्न हर्ग न इश प्रहिदेशि"

है। लेख नं० २०६ में उल्लिखित *हर्ग* का अर्थ डा० बरो ने कर बताया[1] है। पुनः लेख नं० ६९६ में भी *हर्ग* शब्द का उल्लेख है[2]। बरो के अनुसार यद्यपि *हर्ग* शब्द का व्यवहार लेखों में कर के अर्थ में बहुत कम ही स्थलों में है, 'किन्तु *पलि* और *हर्ग* इन दोनों में क्या अन्तर था यह मालूम नहीं[3]। लेख नं० १४१ के *पलिहर्ग* दो प्रकार के कर का संकेत है[4]। फारस में ससानियन काल में भूमि कर को खर्ग कहते थे[5]। कर प्रत्येक भूमि पर लागू था, चाहे वो राज्य की भूमि हो या व्यक्ति की निजी भूमि हो[6]। लेख नं० ३७४ में किल्पेचियन के लोगों से और राज्य की भूमि दोनों से कर वसूल करने की आज्ञा दी गई[7]।

२—हर्ग

१—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ७८८, लैंग्वेज, पृष्ठ १३२

२—लेख नं० ६९६—"अवि च अभहु दम अवनदे रयक हर्ग देवपुत्रस पदमुलदे"

३—बरो, बी० एस० ओ एस० भाग ७ पृष्ठ ७८८

४—वही वही वही
लेख नं० १४१—दुई वर्ष पलि हर्ग अंकेन"

५—सी० हुआर्ट, एशियंट परशिया एन्ड इरानियन सीविलाईजेशन, लन्दन, १९२७ पृष्ठ १५६

६—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८३—किल्मे=सम्पति, थामस, अक्टा० ओ० भाग १३, पृष्ठ ६३ किल्मेच्चि-आसामी; लेख नं० ३७४—"संवतसरि पलि चिंदितग यो किल्मेचियन परिदे यम च रजदे

७—लेख नं ३७४—"सच यहि पूर्विक अदेहि तुगुज सुदर्शन यत्म अचोस मसिनमि संवतसरि पलि चिंदितग यो किल्मेचियन परिदे यं च रजदे पलि चिंदितग"

कर वर्ष में एक बार लेने का नियम था। *संवतसरि पलिप* वार्षिक कर की यह प्रथा कभी-कभी २० वर्षों तक एक सी रहती थी। उदाहरण स्वरूप लेख नं० २७५ से ज्ञात है कि *अजीयम अवन* (स्थानीय नाम) से २० वर्षों तक लगातार कर नहीं वसूल होने के कारण लिखित आज्ञा पत्र भेजा गया, जिसमें शीघ्र से शीघ्र वार्षिक कर जमा कर देने की आज्ञा दी गई।

व्यक्ति की आर्थिक सुविधा को देख कर ही कर वसूल करना था। लेख नं० ३३ के प्रसंगानुसार कर के अधिकारी ने अपने दास से ३ अंबिल और १ अश्व कर में, उसके दुखी अवस्था में भी उससे वसूल किया। यह नियम के विरुद्ध था, अतः राजा ने *चोझवो सोंजक* को स्थिति की वास्तविकता को समझाने के लिए पत्र लिखा। यदि सूचना वास्तव में सत्य हो तो दास को पुनः उसकी सम्पत्ति वापिस देने की आज्ञा दी गई। कर किस अंश में लेने का नियम था—इसका कोई उल्लेख लेखों से प्राप्त नहीं है। डा० बेली ने लेख नं० २११ में उल्लिखित *मग*[१] की समता खोतानी *बग-पत्र* के "*बग*" से करने की चेष्टा की, और इनके अनुसार बग, पलिप कर से सम्बन्धित है[२]।

१—*ऊँट*—बहुधा ऊँट दी जाने की प्रथा थी। पशुओं में ऊँट के नाम विशेष रूप से लेखों में हैं, जिन्हें वार्षिक कर में दिया जाता था[३]। कर में दिए जाने के लिए

१—लेख नं० २११—"त्रिती भगदे एक भग न पलिप इश विसजिदेसि यति"

२—डा० बेली, बी० एस० ओ० एस० भाग ९, पृष्ठ ९३२

३—लेख नं० १६, ४२, १६९

कर में दिए गए वस्तुओं के नाम

ऊँट की आयु और उसके स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान दिया जाता था। लेख नं० १६ से ज्ञात है कि १३ वर्ष से अधिक आयु के ऊँट कर में नहीं लिये जाते थे और साथ ही यह नियम था कि ऊँट अधिक बूढ़े, मोटे या पतले न हों[1]।

२—*पशु*[2]—खरोष्ठी लेखों में उल्लिखित पशु का अनुवाद बरो ने भेड़ किया है, यद्यपि संस्कृत के पशु का अर्थ साधारण रूप से चौपाये जानवर पशु होते हैं। लेख नं० ४३९ के *पशुबल*[3] का अनुवाद बरो ने "भेड़ पालक" किया[4]। अतः लेखों में भेड़ को भी कर में दिए जाने का उल्लेख किया गया।

चीनी तुर्किस्तान से प्राप्त तिब्बती लेख गदहा, सुरा-गाय लम्बे-लम्बे बालों वाला घोड़ा आदि पशुओं का नाम भी कर में दिये जाने का उल्लेख करते हैं।[5]

घी अधिक से अधिक मात्रा में तैयार होता था। कर में प्रायः घी देकर लोग कर मुक्त होते थे। इसके अतिरिक्त कम्बल, कालीन, नमदा, टोकरी, चटाई आदि का भी कर में दिए जाने का उल्लेख है। जिन वस्तुओं की तैयारी होती थी, उन्हें कर में

१—लेख नं० १६—"अझितो दश न वर्ष पल्पि उट न घुघग न कृशग"

२—लेख नं० १९१, १६२, १६४

३—लेख नं० ४३९—"यव अवनंमि पशुवल अति कुवन अंनस यत्म पून अहुनो"

४—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ९१०

५—जे० आर० ए० एस० १९३४, पृष्ठ २७४

देने की प्रथा थी[1]। लेख नं० ७१४ में कर में दिए गए वस्तुओं की एक सूची है, जिनके अन्तर्गत पशु, और वस्तु दोनों का समावेश है।

नियमित कर से अधिक कर लेने का नियम नहीं था। लेखों में कहीं भी आवश्यकतानुसार अतिरिक्त कर लेने की चर्चा नहीं की गई। राज्य के लोग सिर्फ राज्य-शास्त्र के कर-नियम *पलिप घम*, नं० १६४ के अनुसार ही कर ले सकते थे। बकाया कर की माँग की जाती थी जिसमें नियमित कर के साथ कभी दंड—स्वरूप अधिक भी देना होता था। लेख नं० ५७ के "*प्रठ शेष यं च इम वर्षि सघ त्रिसर्जिदवो*" में कर इस वर्ष और गत वर्ष का माँगा गया। अकाल के समय कर माफ कर दिये जाने का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

कर विभाग का प्रधान अधिकारी *चोझवो* होता था[2]। यद्यपि अन्य शासन अधिकारियों में *चोझवो* पद का उल्लेख है। बरो की गणना के अनुसार प्रायः ४० व्यक्ति *चोझवो* विशेषण के साथ लेखों में आए हैं[3]। *चोझवो सोंजक* से भिन्न है यह *चोझवो* पद छोटे-छोटे अधिकारियों के लिए संभवतः था। हो सकता है यह स्थानीय पद हो। चोझवो के कार्य न्याय और शासन कर आदि विभाग दोनों में मिलता है[4]।

१—लेख नं ७१४—"चोझवो तक्र वसु ओणेव ञ्चस च अरोगि प्रेषेयति अजियम अवनंमि पलिप चिंतिदज ग्रिद पशव कोशव अर्नवजि थवस्तए रजि नमंतए चांद्रिकंमंत न अंचक ओगन"

२—ओ० स्टाईन, बी० एस० ओ० एस० भाग ८, पृष्ठ ७७०

३—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ९१

४—वही

सैनिकों के मध्य भी चोझ्वो का उल्लेख है[1]। राज्य के प्रतिनिधियों में चोझ्वो का स्थान अवश्य ही महत्व का रहा होगा।

षोठंग—[2]

षोठंग कर इकट्ठा करने वाले अधिकारी थे। डा० बेली ने इस शब्द की समता तोखारियन पोष्टंकान से किया। और उनके अनुसार *षोठंग* क्रोरयिन के कर आफिसर थे[3]। बरो ने कहा कि *षोथंग* राज्य के अधिकारियों में कर और राज्य सम्पत्ति के हिसाब किताब रखने वाले आफिसर थे[4]। लेख नं० ५६७ से मालूम होता है कि सूगीय नामक एक व्यक्ति गत चार वर्षों से *षोठंग* के पद पर था, किन्तु जब शराब-विभाग का हिसाब-किताब हुआ तो मालूम हुआ कि सूगीय ने यहां अन्याय किया जिससे व्यापार में हानि हुई। अतः सूगीय की इस अयोग्यता के कारण उसे षोठंग के पद से हटा कर किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त करने की आज्ञा दी गई[5]। षोथंग की नियुक्ति स्थानीय *चोझ्वो*

१—लेख नं० ७१३

२—लेख नं० ७—"अहोनो इश षोथंग लिपे विंत्रवेति यथ त्रिती वर्ष हुद अर्सिनस परिदे गवि···

३—बेली, बी० एस० ओ० एस० भाग ८, पृष्ट ९०५

४—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ १२७ डी० सी० सरकार, सेलेक्ट इन्सक्रिपशन, पृष्ठ २३९; षोठंग कर विभाग के अधिकारी थे, और यह राजकीय पद था।

५—लेख नं० ५६७—"चोझवो सोंजकस मंत्र देति स च अहुनो इश सुगीय विंत्रवेति यथ एदस चतुर्थ वर्ष हुद षोठंग हुद गोथमि सुथ विनथग इश मसूवि द्रंगमि गनंन किडे हुद षोठंग

करते थे[१]।

भूमिकर के अतिरिक्त वस्तुओं पर चुंगी देने की प्रथा संभवतः थी। स्टाईन ने द्रंग का अर्थ उस स्थान से लिया, जहां दूसरे देश से आयी हुई वस्तुओं पर देश के राज्य द्वार के अन्दर जाने के पहले चुंगी दी जाती थी[२]। किन्तु डा० बरो खरोष्ठी लेख के द्रंग का साधरण रूप से, कर विभाग के कार्यालय के अर्थ में प्रयुक्त हुआ बताते हैं। खरोष्ठी लेख नं० ४३९ के अनुसार एक व्यक्ति पांच या छः *द्रंगों* से अधिक का अधिकारी नहीं हो सकता था[३]। डा० बरो का कहना है कि द्रंग का साधारणतः कार्यालय के अर्थ में उल्लेख किया गया[४] है। पुनः लेख नं० ९८ के *"ष्गितस द्रगंमि अंन भविद"* का अनुवाद है ष्गितस के *द्रंग* में अनाज नापा गया[५]। इस प्रसंग से स्पष्ट होता है कि *द्रंग* वह कमरा था जहां अनाज रखा जाता था। भिन्न-भिन्न वस्तुओं के लिए भिन्न-भिन्न *द्रंग* थे, जैसा कि लेख नं० ५६७ के मसुवि द्रंगंमि अर्थात् शराब विभाग से मालूम होता है[६]।

१—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ १२८, एफ० डब्लू० थामस, ऐक्टा० ओ० भाग १३ पृष्ठ ६२

२—स्टाईन, एशियंट खोतान, पृष्ठ ४०२

३—लेख नं० ४३९—"पुछिदवो भूतर्थ एव एति द्रंग घरिदये सियति रभक गवि न कुवि पिचविदव्य यो द्रंग न घरितग सिभति तस रयक गवि पिचविदवो"।

४—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ५१० वही लैंग्वेज, पृष्ठ ९८

५—बरो, ट्रांसलेशन, पृष्ठ १८ लेख नं० ९८ का अनुवाद।

६—बरो, बी० एस० ओ० एस० भाग ७ पृष्ठ ५१०,
बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ९८

खरोष्ठी लेखों से बहुधा यह शिकायत मिलती है कि लोगों ने बकाया कर समय पर नहीं चुकाया[१]। प्रायः एक दो वर्ष के बकाया कर का उल्लेख मिलता है[२]। संभवतः कार्यालय के कर्मचारी कर इकट्ठा करने में इतने तटस्थ नहीं थे कि समय पर कर वसूल न कर सकें। कर समय पर नहीं देनेवाले या देने में आना-कानी करनेवालों को राज्य की ओर से दंड मिलता था। लेख नं० ४५० से ज्ञात है कि एक कृषक ४ वर्ष से अपनी भूमि का कर अपनी असमर्थता के कारण नहीं दे सका, फलतः उसे जमीन्दार (जमीन-मालिक) ने भूमि जोतने से मना कर दिया और साथ ही उसकी अपनी भूमि और मकान दोनों बिचवा भी दिया। इतना ही नहीं, बल्कि उसके स्वामी ने उसे, उसकी पत्नी, बच्चे, माँ आदि सभी सामानों के साथ उसे उसके घर से निकाल दिया। राज्य की ओर से इस व्यक्ति को क्षमा किया गया या नहीं यह ज्ञात नहीं।

सैनिक व्यवस्था

राज्य में सैनिक व्यवस्था थी, इसका उल्लेख भी लेखों में मिलता है। लेख नं० १३३ से मालूम होता है कि *सूपियों* से बचने के लिए सैनिकों का एक दल था, जिनमें प्रायः घुड़सवार हुआ करते थे[३]। *सूपियों* के जबतब के आक्रमण के कारण राज्य के लोग बहुत भयभीत रहते थे। अतः इन्देरे में इन आक्रमणकारियों के रक्षार्थ एक सैनिक दल को सदा के लिए नियुक्त किये जाने का उल्लेख

१—लेख नं० ४२, १९८ १६४-९, २११, २४९, ३७०, ३८७, ७१४

२—लेख नं० ४२, ४५०

३—लेख नं० १३३ "उर्थिस तपदय कुनसेनेन अत्र विसजिदेमि अंश अंशवर इश चवल विसजिदवो"

मिलता है[1]। लेखों से ज्ञात है कि इन सुपियों का आक्रमण प्रायः चल्मदन, चडोटा और सच इन्देरे में हुआ करता था[2]। *सुपिय* शत्रुदल थे, जो प्रायः लुटेरों की भाँति मनुष्य और पशु को चुरा या भगा कर ले जाया करते थे[3]। डा० वरो का अनुमान है कि कुन-लुन पर्वत के निकट के यह आक्रमणकारी थे। लीडमन द्वारा प्रकाशित शक ग्रन्थ में हूणों के साथ सुपिय का उल्लेख है, जिन लोगों ने खोतान राज्य को लूटा[4]। खरोष्ठी लेखों की सुपिय की समता खोतान के तिब्वती विवरण में उल्लिखित सो-ब्यि या सुम-पस् से की जाती है[5]। सूपियों से रक्षा के लिए राज्य के अधिकारियों को सदा सतर्क रहना होता था। गुप्तचरों के एक समूह का उल्लेख लेख नं० ११९ से मिलता है। एफ० डब्लू थामस के अनुवाद के अनुसार हमलोगों ने सुना है कि आज से चार महीने के पश्चात् *सूपियों* का आक्रमण चलमदन में होगा। अतः आपको शीघ्र ही गुप्तचर विभाग के लोगों को भेज देना चाहिए[6]।

१—लेख नं० ९७८ सुपियन परिदे सुथ उवषंग महंचि तुस्य निर्विग भत्रिदव्य नित्थ कलंमि सचमि स्पस कर्तव्य यो....

२—लेख नं० ११९, ३२४, ७२२, चडोटा १८३—यत्र काल सुपिये चडोतंमि अंग तं ति

वरो, लैंग्वेज, पृष्ठ १३१

३—लेख नं० २१२—"एदस मिषियंमि खदंनर्थी कके लिपपेस च वडवियनि ओडितंति तगदे सुपियेहि अनसितंति"

४—वरो, लैंग्वेज, पृ० १३१—सुपिय का अर्थ सीमान्त प्रहरी गुप्तचर

५—एफ० डब्लू० थामस, ऐक्टा० ओ० १२, पृ० ९४

६—वही ,, वही पृ० ९७ लेख न० ११९ का उल्लेख किया अहुनो इस श्रुयति सुपिये चल्मतानेषु ५ हम चतुर्थ मसंमि निगत अगंतव्यः तुष ६ स्तोर-वर स्पस-वंने हश विसर्जिषतु।

सैनिकों में घुड़सवारों का ही उल्लेख अधिकांश लेखों में है।[1] सैनिकों के घोड़ों की देख-रेख के लिए राज्य की ओर से प्रबन्ध था। क्लसेंचि पद का एक राज्य अधिकारी विशेष रूप से इन सैनिकों के अश्व और ऊंट की देख-रेख के लिए ही नियुक्त किया जाता था।[2] वह पद आनुवंशिक था। लेख नं० १० में *लिपये* ने कहा है कि वह पेत-अवन में क्लसेंचि का काम वंशपीढ़ी के अनुसार कर रहा है न कि *अरिग्ग* का।[3] राज्य के प्रतिनिधियों में *कोरि* पदवाले एक और अधिकारी का उल्लेख लेखों में है[4]। जिसके कार्य *क्लसेंचि* की ही भांति राज्य के पशुओं की निगरानी करना था।[5]

रक्षा विभाग :

राज्य के आन्तरिक उत्पातों के लिए रक्षा का प्रबन्ध था। राज्य के चोरों, लुटेरों और दुष्टों के लिए न्यायालय की व्यवस्था थी। ऊंट पर लदे हुए सामानों की चोरी[6] और खलिहानों में से अनाजों की चोरी का उल्लेख कई लेखों में है। चोरी गई वस्तुओं में अनाज, वस्त्रआदि सभी प्रकार की सम्पत्ति का उल्लेख है। घी

१—लेख नं० १०, ११९, ५६२ में राज्य की ओर चार सेनाओं का क्लसेंचि।

२—बरो, लैंग्वेज, पृ० ८९ सैनिकों के अश्व और ऊँट की देख-रेख के अधिकारी क्लसेंचि होते थे।

३—लेख नं० १० "इस लिपये विं वेति यथ एप पेत-अवनंमि चि क्लसेंचिय पितर पित उपदये न इंचि अखिग यहि एद कीलमुद्र अत्र एशति"

४—लेख नं० ४०, ६४, २२८, २२३, बर, लैंग्वेज, पृ० ८४

५—बरो, लैंग्वेज, पृ० ८४ पशुओं के अधिकारी के अतिरिक्त न्याय-विभाग के कानूनी झगड़ा।

६—लेख न० ५२ "धमेन महि महरयस उट लिषित तस नथ चोरितग होअति

की चोरी का उल्लेख बहुधा लेखों में है ।[१] लेख नं० १७ से ज्ञात है कि लोग जमीन के अन्दर धन छुपा कर रखा करते थे । संभवतः चोर और लुटेरों के भय से छुपाने की यह विधि लोगों ने अपनायी हो । जमीन के अन्दर धन छुपाने की प्रथा भारत में अब भी गांवों में प्रचलित है । बड़े-बड़े बक्स और बैंक के अभाव में प्रायः लोग उस धरती, जो कच्ची मिट्टी के ही मकानों के कमरे में प्रायः होती थीं, उसको खोद कर गहने, रुपये आदि बहुमूल्य वस्तुएं छुपा दिया करते थे । लेख नं० १७ के अनुसार पूगों और लिपये ने सूचित किया कि क्रेय और षुल्यित ने अपनी सम्पत्ति धरती के अन्दर छुपा कर रखा । किन्तु कत्ते और लोमड़ी ने चमड़े पोथी के कारण उसे बाहर निकाल लिया । इसके पश्चात् मषिडगे और णेय ने पोथी के अन्दर लिपटे धन को चुरा लिया ।[२]

न्यायालय में बड़ी से बड़ी और छोटी से छोटी समस्या का सुलझाव होता था । व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक और राज्यसंबंधी सभी प्रकार के अन्यायों को लोग न्यायालय पहुँचाते थे । खरोष्ठी लेखों में प्रायः बच्चों के गोद लिए और दिए जाने के समय कुठिछर[३] के कारण आपस में मतभेद हो जाने का

१—लेख नं० १२ "कमोढमि नचिर गंदवो छिद्र चोरितग प्रचे धिवद शवयेन सचियेन समुह" ।

२—लेख नं० १७ "इस पुगो-लिपयेश च विं वेति यथ क्रेय षुल्पितस च । गुठथनंमि थविदग होथति शुभे लोमटि खंनितंति प्रगट निखलितंति तत्र चाम पोथी थवितग प्रचे खनितंनि पच तदे किंचि....।"

३—बरौ, लैंग्वेज, पृ० ८३ कुठिछर—बच्चे गोद लेने के समय, बच्चे के दूध का मूल्य जो माता-पिता को दिया जाता था, उसे कुठिछर कहा । देखिए, तीसरे और चौथे अध्याय में ।

उल्लेख है, जिसके कारण लोगों को न्यायालय तक जाने की आवश्यकता होती थी। लेख नं० ४५ के अनुसार चिमिके नाम की एक दासी की कन्या को रुत्रय ने गोद लिया। न्यायालय के फैसला के अनुसार एक "*तिर्ष अश्व*" कन्या के *कुठिछर* स्वरूप दिया गया।[१] बच्चों के इस प्रकार की लेन-देन का प्रायः न्यायालय में न्यायाधीश और अन्य अधिकारियों के सम्मुख होता था।[२] कन्या के क्रय-विक्रय की प्रथा राज्य विधान द्वारा स्वीकृत थी, सम्पत्ति की लेन-देन, जिनमें चल और स्थावर दोनों प्रकार की सम्पत्तियों का समावेश था, राज्य के विधान के अनुसार होना था। इसमें किसी प्रकार के भी अनुचित मोल-भाव के कारण जब मतभेद हो जाया करता था तो लोग अपनी-अपनी समस्या लेकर न्यायालय जाते थे। विवाह, सम्पत्ति का उत्तराधिकारी, और आपसी वैमनस्यता के कारण हुए झगड़ों के फैसले का उल्लेख तो लेखों में भरा पड़ा है।[३]

न्यायालय के अधिकारियों में संभवतः एक प्रधान न्यायाधीश था। लेख नं० ४६ में "*इश वसु ल्पिपेय योन सगि तोंग*" "*विंझविति यथ अत्र स्यद्वरि महतव विवद्‌ प्रोछितंति स्त्री कोनुम*....." का अनुवाद डा० बरो ने किया—"वसु ल्पिपेय ने यह विवरण दिया है कि राजा के दरबार के न्यायाधीश ने इस समस्या पर विचार किया[४]। अन्य स्थलों पर भी न्यायाधीश का उल्लेख

१—लेख नं० ४५—"इश वसु ल्पिपेय बिगविति यथ एदश दझि विमिके घितु जनिति गिटै इश रयद्वरंमि कुठछिर तिर्ष अस...."

२—लेख नं० ११, ४५, ३३१, ४१५....

३—देखिए, तीसरा और चौथा अध्याय

४—बरो, ट्रान्सलेशन, पृष्ठ ११, लेख नं० ४६

है। इसके अतिरिक्त "*गुशुर*", "*चंकुर*", "*चुवलयिन*", "*चोझ्वो*" इन पदों के भी उल्लेख हैं, जिनकी चर्चा न्यायालय में न्याय संबंधी प्रसंगों में की गई है। लेख नं० २१६ से मालूम होता है कि गुशुर अन्य अधिकारियों के साथ राजा के दरबार में अवश्य ही इस समस्या पर पूर्ण रूप से विचार करेगा[1]। डा० बरो के अनुसार काल और ओगु[2] की ही भाँति गुशुर भी उच्च पद का था। इनके कार्य न्याय सम्बन्धी थे।[3]

चंकुर

खरोष्ठी लेखों में *ओगु चोझ्वो*, तसुचस् *चुवलयिनस* जैसे राज्य अधिकारियों के साथ चंकुर का भी उल्लेख न्याय विभाग के कार्य में है[4]। लेख नं० १६ से मालूम होता है कि राजा ने पेत अवन स्थानीय नाम को *चंकुर अर्जुन* के हाथ सौंपा[5]। एफ० डब्लू० थामस के अनुसार चंकुर न्यायालय का अध्यक्ष था[6]। लेख नं० ४३७ में चंकुर कप्मेय और कित्सत्सि लुठु द्वारा समस्या

१—लेख नं० २१६-"रय द्वरंमि गुशुर महत्वन विस्तिर्न विपुल चितिंदवो"

२—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८०, राज्य के अधिकारियों में ओगू पद के अधिकारी श्रेष्ठ थे, अधिकांश लेखों में ओगु का उल्लेख है।

३—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८७

४—लेख नं० ६१८, ५०६, ५८३

५—लेख नं० १६—"स च अहोनो मय महरयेन पेत—अवन चंकुर अर्जुनस पिचनिद पुर्विक अदेहि"
डा० बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ८८, प्रो० थामस, जे० आर० एस० एस० १९२७ ने तिब्बती लेख के चंखयूर से समता की ओर इसका अर्थ रक्षक बताया, अक्टा ओ० भाग १३, पृष्ठ ७३ संस्कृत नगर रक्षक।

६—एफ० डब्लू० थामस, ओक्टा ओ० १२, पृष्ठ ६८

के निर्णय का उल्लेख है[1]।

चुवलयिन

लेख नं० ५८२ में चुवलयिन तिरफर ने चडोटा में न्यायालय के अन्य सदस्यों के साथ मामले पर विचार किया[2]। डा० बरो के अनुसार चुवलियन न्यायालय के सदस्य थे, जिनका मान ओगु, गुशुर और चंकुर से हीन था, किन्तु चोझवो से संभवतः उच्च पद था[3]।

१—लेख नं० ४३७

२—लेख ० ५८२—"चडोतंतिमि अस्तम पुछितंति ओगु जेयमत्रचंकुर चतरग चुवलनि त्रिफर"

३—बरो, लैंग्वेज, पृष्ठ ९०

अध्याय—आठवां

धार्मिक-जीवन

खरोष्ठी लेख मध्यएशिया के लोगों के धार्मिक जीवन का जैसा चित्रण देते हैं, वह भारत के बौद्ध धर्म का स्वरूप होते हुए भी अपने धार्मिक जीवन में विलक्षण है[1]। धर्म के क्षेत्र में मध्यएशिया के इन प्रदेशों ने अन्य देशों के मध्य माध्यमिक का कार्य किया। भारत और चीन के बौद्ध धर्म प्रचारकों का ठहराव होने के नाते चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों को इन यात्रियों द्वारा ही संभवतः धर्म के स्वरूप का परिचय मिला[2] होगा।

धर्म प्रदेश—

मध्यएशिया में बौद्ध धर्म का प्रवेश भारतीय बौद्ध-धर्म-प्रचारक मौर्य सम्राट् अशोक से पूर्व हुआ था[1]। अशोक द्वारा राजकीय सहायता मिलने से बौद्ध धर्म भारत की प्राकृतिक सीमा को पार कर एशिया, यूरोप और अफ्रिका में फैला[2]। अशोक के लेख भी इन सुदूर देशों में धर्मदूत भेजे जाने का उल्लेख करते हैं।

चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों में बौद्ध धर्म के विकसित रूप का उल्लेख खरोष्ठी लेखों के अतिरिक्त चीनी यात्रियों के यात्रा-वृत्तान्त

१—देखिए, क—ए० स्टाईन, एन्सियन्ट खोतान—सेरिन्डि या—भाग १ और २; ख—एस० बील, बुद्धिस्ट रेकार्ड भाग १ और २; ग—बागची, इन्डिया एन्ड चाइना; घ—रतनचन्द्र अग्रवाल, लाइफ आफ मोन्क एन्ड सर्फस एज डेपिक्टेड इन खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट।

२—बागची, इन्डिया एन्ड चाइना पृष्ठ ७

से मिलता है। ह्वेन्-त्सांग के यात्रा वृत्तान्त के कथानक के अनुसार अर्हत वैरोचन ने सर्व प्रथम खोतान में बुद्ध की शिक्षाओं का प्रचार किया था। कहा जाता है कि खोतान में बुद्धसंदेश पहुँचने के पूर्व अर्हत वैरोचन काश्मीर से खोतान गये और एक काष्ठ खंड पर ध्यानमग्न हो गये, इसी समय कुछ लोगों ने अर्हत के पहनावे और उसके बाह्य रूप से प्रभावित होकर राजा को इस नवागन्तुक की खबर दी। राजा ने स्वयं जाकर अर्हत से परिचय पूछा। अर्हत ने अपने को तथागत का उपासक बताया और संक्षेप में बौद्ध धर्म का सार कह सुनाया। जन्म और मृत्यु के बंधन से मुक्त हो भगवान बुद्ध तीनों लोक की रक्षा के हेतु आए। राजा ने बुद्ध दर्शन की प्रतिज्ञा पर अर्हत की इच्छा से विहार बनवाया। भिक्षु इकट्ठे हुए, और शीघ्र ही आकाश से भगवान बुद्ध हाथ में घण्टा लिए नीचे उतरे। यह देख राजा को अर्हत की शिक्षा में विश्वास हुआ और उसने बुद्ध धर्म ग्रहण कर धर्म के प्रचारार्थ प्रयत्न करना आरम्भ किया[३]।

सुंग-युन् के कथानक का सार है कि अर्हत वैरोचन काश्मीर से खोतान गया, वहाँ जाकर उसने बौद्ध धर्म का प्रचार किया। राजा उससे प्रभावित होकर बुद्ध का भक्त बन गया और कुछ समय पश्चात् उक्त विहार बनवाया, जो खोतान का सर्व प्रथम बौद्ध विहार था[४]।

खोतान के इतिहास के अनुसार विजय संभव के पाँचवें

१—चन्द्रगुप्त वेदालंकार, बृहत्तर भारत, पृष्ठ १०१

२—वही वही ,, ,,

३—एस० बील, बुद्धिस्ट रेकर्ड भाग—२ पृष्ठ ३१२—१३

४—एस० बील, बुद्धिस्ट रेकार्ड ट्रवल आफ सुंग-युन, पृष्ठ ९

वर्ष में खोतान में बौद्ध धर्म की स्थापना हुई[1]।

चीनी और तिब्बती कथानकों से ज्ञात होता है कि काशगर शू-ले में बौद्ध धर्म का प्रवेश खोतान से ही हुआ[2]। ह्वेन-त्सांग के विवरण से पुनः उसकी पुष्टि होती है। कूचा, यारकन्द, वभियान, तुरफान आदि पड़ोसी प्रदेश बौद्ध धर्म के प्रचारकों से दूर नहीं रह सके। ईसा की तीसरी सदी में कूचा बौद्धधर्म का बहुत बड़ा केन्द्र था। वहाँ एक हजार मन्दिर और विहार थे[3]।

फा-शी-यान, चीनी यात्री, ने चौथी शताब्दी में इन प्रदेशों की यात्रा की थी। इन्होंने लिखा है कि बौद्ध धर्म सम्पूर्ण चीनी तुर्किस्तान का सर्वमान्य धर्म था। भिक्षु और बिहार की स्थापना धर्म की उन्नत अवस्था का प्रतीक था[4]।

चीन में बौद्ध धर्म का प्रवेश ई० पू० २१८ में हुआ[5]। काश्यप मातंग और धर्मरत्न इन दो धर्म प्रचारकों ने सर्व प्रथम

१—राहुल, बौद्ध संस्कृति पृष्ठ २३८, विजय संभव की तिथि २११ ई० मानी गई।

२—ए० स्टाईन, एन्सियन्ट खोतान, पृष्ठ ९६
"Dr. Frunkc calls attention to a Tibetan text translated by Dr. Rockhill embodying traditions of Khotan, which mentions that a Princess of Go-hyag, who became the wife of king Vijaisingh of Khotan, helped to spread Buddhism in Shwlik."

३—राहुल, बौद्ध संस्कृति, पृ० २४८

४—बागची, इन्डिया एन्ड चाईना, पृ० ५

५—बील, ट्रेवल आफ फा-शी-यान एन्ड सुंग-युन, लन्दन, १८६९ पृ० ५

चीन में धर्म प्रचार का कार्य किया[1]। चीन में बौद्ध धर्म फैलानेवाले भारत और मध्यएशिया के बौद्धभिक्षु थे। कई शताब्दियों तक मध्यएशिया के धर्म प्रचारकों ने चीन और पास के देशों में जाकर धर्म ग्रन्थों का अनुवाद किया। चीन में २६५ ई० से ३१६ ई० तक ही में ३७०० बौद्ध भिक्षुओं के होने की और प्रायः १८० धर्म संस्थाओं के खोले जाने का उल्लेख है। पुनः चौथी शताब्दी के १०४ वर्षों के अन्दर ही १७०६८ संस्थाएँ स्थापित हुई और २६७ बौद्ध ग्रंथों का अनुवाद किया गया[2]। ५वीं शताब्दी के बाद से बौद्ध धर्म चीन के लिए विदेशी धर्म न रह कर देश का ही धर्म हो गया। चीन में महायान की उदारता, हीनयान की अपेक्षा अधिक सफल हो सकी। महायान धर्म के साथ ही महायान दर्शन भी चीन के लोगों के अध्ययन का विषय हुआ।

धर्म का स्वरूप

खरोष्ठी लेखों से चीनी तुर्किस्तान में भारत के बौद्ध धर्म का ही स्वरूप मिलता है। यद्यपि वहाँ का भिक्षु जीवन भारत के भिक्षु जीवन से सर्वथा भिन्न है। लेख नं० ३६० में महायान सम्प्रदाय का उल्लेख है[3]। महायान का परिचय महायान सम्प्रदाय के नाम से ही चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों को हुआ। फा-शी-यान ४०० ई० में खोतान पहुँचा था, जब कि बौद्ध धर्म वहाँ खूब फल-फूल रहा था। उसने लिखा—लोग हमारे धर्म के अनुयायी हैं और बड़ी प्रसन्नता से धार्मिक गीतों में शामिल होते हैं। भिक्षुओं की संख्या हजारों हैं और अधिकतर महायान के मानने

१—पी० सी० वागची, इन्डिया एन्ड चाइना, पृ० ९३

२—वही पृष्ठ ९५-९७

३—लेख नं० ३९०—"सुनमपरिक्रितितस महायान सम्प्रसति थि तस।"

वाले हैं[1]। चांग-यू ने कूचा का निवरण देते हुए कहा कि पाँच हजार भिक्षुओं के लिए वहाँ १०० संघाराम थे, जो सभी सर्वास्तिवाद छोटी सम्प्रदाय के माननेवाले थे। इनके उद्देश्य और सिद्धान्त की समता भारत के विनय-सिद्धान्त से की जाती है[2]। फा-शि-यान ने लिखा कि कूचा में हीनयान की प्रधानता थी, किन्तु कुमारजीव के कारण वह महायान का गढ़ बना। ह्वेन-त्सांग ६३० ई० में कूचा से गुजरा था[3]। इसने भी कूचा के सर्वास्तिवाद हीनयान सम्प्रदाय के भिक्षुओं का उल्लेख किया[4] है। इनके अनुसार वहाँ के भिक्षु "त्रिकोटिपरिशुद्ध" मांस ग्रहण कर लेते थे किन्तु अपने प्रातिमोक्ष के नियमों को बड़ी कड़ाई से पालन करते थे[5]। फा-शि-यान के समय काशगर में हीनयान की प्रमुखता बताई गई[6]।

चीनी यात्रियों के विभिन्न वृतान्तों से चीनी तुर्किस्तान के प्रदेशों में बौद्ध धर्म के महायान और हीनयान—इन दो प्रमुख सम्प्रदायों के अस्तित्व का प्रमाण मिलता है।

धर्म ग्रन्थों के अनुवाद से वहाँ के लोगों के धर्म का वास्तविक स्वरूप मिला। लेख नं० २८८ में "बोधिसत्त्व" का उल्लेख है।

१—राहुल, बौद्ध संस्कृति पृष्ठ २४०

२—एस० बील बुद्धिस्ट रेकार्ड भाग १, पृष्ठ १९

३—कुमारजीव ने चीन में महायान का सर्वप्रथम प्रचार किया। देखिए, बागची, इन्डिया एन्ड चाईना, पृष्ठ ३३

४—राहुलजी ने लिखा कि यहाँ सर्वास्तिवाद से यह नहीं समझना चाहिए कि वह महायान सूत्रों को नहीं मानते थे। राहुल, बौद्ध संस्कृति पृष्ठ २४९

५—राहुल, बौद्धसंस्कृति पृष्ठ २४९

६—ए० स्टाईन, एंशियंट खोतान, पृष्ठ ५६

बुद्ध प्राप्ति के पूर्व की स्थिति बोधिसत्त्व का भी सम्मान था, यह स्पष्ट है[1]।

बोधिसत्त्व महायानियों का आदर्श था। संसार में रह कर भी दुखी प्राणियों के दुःख-विनाश तथा निर्वाण-लाभ के लिए सतत-प्रयत्न करना बोधिसत्त्व का आदर्श था। जो व्यक्ति बोधिसत्त्व को प्राप्त करता है तथा लोक कल्याण के लिए यत्नशील रहता है, उसे भी बोधिसत्त्व कहते हैं। नागार्जुन ने बोधिचित्त में कहा है—"सभी बोधिसत्त्व महाकरुणाचित्त वाले होते हैं और प्राणीमात्र उनकी करुणा के पात्र होते हैं[2]। खरोष्ठी लेख में बोधिसत्त्व का अन्य किसी स्थलों पर उल्लेख नहीं मिलता। किन्तु महायान सम्प्रदाय के अस्तित्व के नाते बोधिसत्त्व के इसी भारतीय स्वरूप का संकेत लेख के प्रसंग से समझा जा सकता है। श्री स्टाईन को खोतान से जो अवशेष प्राप्त हुए हैं, उनमें एक 'बोधिसत्त्व प्रज्ञाकूट' नाम का उल्लेख करता है[3]।

धर्म के त्रिरत्न बुद्ध, धम्म और संघ के प्रति सम्मान और श्रद्धा का उल्लेख यद्यपि खरोष्ठी लेखों से नहीं मिलता किन्तु चांग-यू के विवरण से ज्ञात होता है कि कूचा के राजा बुद्ध धर्म और संघ की पूजा करते थे[4]।

१—लेख नं० २८८—"देव मनुंश—संपुजितस प्रचछ बोधिसत्व सहचोझवो सोचंक

२—श्री धीरेन्द्र मोहन दत्त, भारतीय दर्शन हिन्दी रूपान्तर श्रीहरि मोहन झा, पृष्ठ १६७

३—स्टाईन, एशियंट मेन्यूसक्रिप्ट फ्राम खोतान जे० आर० ए० एस० १९०६ पृष्ठ ६९६

४—एस० बील, बुद्धिस्ट रेकार्ड, भाग १, पृष्ठ ११

प्रत्येक बुद्ध का उल्लेख नं० ५११ में है[१]। बुद्ध के इस स्वरूप का परिचय चीनी तुर्किस्तान के लोगों में भी भारतीय बौद्ध उपासकों की ही भाँति था। धर्म के अनुशासन का उल्लेख करते हुए कहा गया कि उन धर्मात्माओं की भी पूजा करनी चाहिए जो प्रज्ञान की स्थिति में पहुँच चुके हों, अथवा जिन्हें आत्मदर्शन हो चुका हो। पर्वत की गुफाओं में, एकान्त स्थान पर अपने ही उद्देश्य में लीन "प्रत्येक-बुद्ध" का दर्शन हुआ।

खरोष्ठी लेखों में एक ही स्थल पर 'भत्तो' नाम के एक देवता का उल्लेख है, जिन्हें *अरि* कुनगेय ने गौ की बलि दी[२] थी। कहा नहीं जा सकता कि यहाँ 'भत्तो' किसी स्थानीय देवता के लिए आया है अथवा भगवान बुद्ध का ही एक रूप माना गया है। बरो के खरोष्ठी शब्द-कोष के अनुसार अरि किसी भिक्षु के लिए श्री अथवा महोदय के रूप में आया है। अतः इस दृष्टि से कुनगेय एक भिक्षु था जिसने "भत्तों" देवता पर बलि चढ़ाई। किन्तु लेख के अन्य प्रसंगों में जहाँ भी बौद्ध भिक्षु का उल्लेख है, वहाँ भिक्षु के लिए श्रमन, श्रमंत, श्रंमन अथवा भिक्षु शब्द के साथ ही। "अरि कुनगेय" भिक्षु था अथवा कोई आदरणीय व्यक्ति, यह संदेह रह जाता है। यदि इसे भिक्षु मान कर 'भत्तो' देवता को बुद्ध का ही एक स्वरूप मानें तो बलि देने की प्रथा भारत के बौद्ध धर्म के किसी अंग में नहीं आती है। हो सकता है कि चीनी-तुर्किस्तान के बौद्ध धर्म में इस प्रकार का अन्ध विश्वास आ गया हो। और यदि

१—लेख नं० ५११—"प्रत्येक बुद्ध च विवेगम आश्रित एकाभिराम गिरिवंतरालय स्वकर्थ...."

२—लेख नं० १९७—"मतो-देवतास गोपज्ञं हुद अरि कुनगेय यत्रेति अहु सुमिमं"

"कुनगेय" किसी माननीय व्यक्ति का ही नाम हो तो मतों से किसी स्थानीय देवता का अनुमान किया जा सकता है।

बलि देकर देवता को प्रसन्न करने की भावना धर्म के अन्दर आए अन्धविश्वासों का प्रतीक है। इस प्रकार के अन्धविश्वास का एक उदाहरण लेख नं० ५६५ से मिलता है।

खरोष्ठी लेख, भारत के बौद्ध भिक्षु और श्रमणके नाम से ही चीनी तुर्किस्तान के बौद्ध भिक्षुओं का उल्लेख करते हैं। लेखों में

भिक्षुगण

उद्धृत श्रमन, श्रंमन और श्रमंन[1] शब्द संस्कृत के "श्रमण" का ही रूप मालूम होता है, जो भिक्षुओं के लिए आये हैं[2]। धर्म में इतना साम्य होने पर भी चीनी तुर्किस्तान के भिक्षुओं का जीवन भारत के बौद्ध भिक्षुओं से सर्वथा भिन्न है। मध्य एशिया के भिक्षुओं का पारिवारिक जीवन, सामान्य गृहस्थ की भाँति पत्नी, बच्चे और धन के बीच बीता करता था। लेख नं० ५०० में २,८०० माशा एक बौद्ध भिक्षु द्वारा दिए जाने का उल्लेख करता है[3]। ऐश आराम के साथ भिक्षुगण जमीन, दास और कन्या का क्रय-विक्रय किया करते थे, और बहुमूल्य रेशमी वस्त्र पहना करते थे। अतः इस स्थिति

१—लेख नं० २६९—स च अहुनो इश श्रमन सङ्गरछि विंझवेनि यथ एदस ·······लेख नं० ३४९—अहति भुदर्थ चडोर्तमि श्रमंन आनन्दसेन····

२—लेख में० भिछु शब्द का उल्लेख भिक्षु के स्थान पर किया गया। लेख नं० ४८९—"व्रश्न रतु भिछु अभोमत डुर्तंति उदित देवपुत्रेन भिछुसंग ईसा के दूसरी शताब्दी के चीनी बौद्ध माउ-चेन ने खोतान में बडी संख्या में भिक्षुओं को देखा था। राहुल, बौद्ध संस्कृति: पृष्ठ २४१

३—लेख नं० ५००—श्रयंन मोछ प्रियस परिदे भाष गिड सहस्र

में भिक्षु का २८०० ऋण देना मान्य समझा जा सकता है, साथ ही प्रशंसनीय भी।

इन सबके बावजूद भी भिक्षु धर्म के *नियम* और *सिद्धान्तों* से अनभिज्ञ नहीं थे[1]। लेख नं० ४८९ के अनुसार "राजधानी के भिक्षुगण ने चडोटा नीया के भिक्षुओं के लिए नियम बनाया, किन्तु ऐसा सुना गया है कि नवदीक्षित भिक्षु अपने से वृद्ध भिक्षु की आज्ञा या आदेश पर ध्यान नहीं देते और उनकी अवहेलना करते हैं। इन सिद्धान्तों का प्रतिवादन राजा ने स्वयं भिक्षुओं के सम्मुख किया था। फलस्वरूप संघ की अव्यवस्था के कारण वृद्ध शीलप्रभ और पुन्यसेन, "विहारवल" विहार के शासन के लिए शासक नियुक्त किए गए। इनकी नियुक्ति इसलिए की गई कि ताकि संस्था के सभी भिक्षु मन से शान्त रह सकें। भिक्षु-संघ के किसी भी कार्य में भाग न लेने वाले भिक्षु को दंड के रूप में रेशमी कपड़े का एक थान देना अनिवार्य था। *पोसथ* एक धार्मिक रीति थी, जिसमें सबों की उपस्थिति आवश्यक थी। उपस्थित न होने वाले भिक्षुओं के लिए दंड था। पोसथ का निमंत्रण पाकर भी ग्राहस्थ पहनावे में जाने वाले भिक्षुओं को दंड के रूप में एक सुन्दर कीमती रेशमी थान देना होता था[2]। भिक्षुओं के संघ के अतिरिक्त उनके सैद्धान्तिक सिद्धान्तों का भी उल्लेख इस लेख से मिलता है।

१—लेख नं० ६११

२—लेख नं० ४८९—येन भिछुसंग अलमंन भवेयति यो भिछु संगकरनि न अनुवर्तयति तस वदवो पट १ यो भिछु पोसथकमय नानुवर्तयति तसय दंड पट यो भिछु पोसथकाम निमंत्रेषु गृहस्थ चोडिन प्रविशयति तस दंडिदवो पट। यो भिछु....।

लेख के प्रसंग संघ के कठिन नियमों का विवरण देते हैं, साथ ही संघ की एकता का भी अनुमान होता है। भिक्षुओं में अनुशासन और विनय के पालन की चीनी यात्रियों ने प्रशंसा की है। फा-शि-यान ने खोतान के संघारामों में आगंतुक भिक्षुओं के आतिथ्य की प्रशंसा की[1] है। ह्वेन-त्सांग ने काशगर के हजारों सर्वास्तिवादी भिक्षुओं का उल्लेख किया है[2]।

विवाह—गृहस्थों की भांति भिक्षुओं के विवाह का भी उल्लेख मिलता है। यह कोई आवश्यक नहीं था कि भिक्षु, भिक्षुश्रेणी की कन्या से ही विवाह करें। श्रमन

पारिवारिक जीवन

सुन्दर की कन्या एक कुम्हार 'कुलल' के पुत्र के साथ व्याही गई[3]। साथ ही एक श्रेणी में विवाह का दूसरा उदाहरण भी लेखों से मिलता है जैसे—भिक्षु बुद्धवर्मा की कन्या का विवाह भिक्षु जिवलों अठम के साथ हुआ[4]।

विवाह में लोते और मुकेषी लेने की प्रथा भिक्षुओं के साथ भी लागू थी। लेख नं० ४७४ के अनुसार भिक्षु संघपाल ने *लोते* और *मुकेषी* देकर यदि विवाह किया हो तो उसके पुत्र और पुत्री वांशिक सम्पत्ति के अधिकारी हो सकते हैं[5]।

१—राहुल बौद्ध संस्कृति पृष्ठ २४०।

२—राहुल वही पृष्ठ १४६

३—लेख नं० ६२१—कैच नाम तस पुत्र इश सनमोवि····त्रयन सुन्दरस धितु सुप्रिय नाम भर्य अनित······

४—लेख नं० ४१८—श्रमंन शरिपुत्रेय स खितु शिंसतेयए श्रमंन बुधवमस जात्वेन भर्य दित त्रियए शिंसतियएधितु पुं वतियए नम श्रमंन जिवलो अठमस भर्य दिदि हुअति

५—लेख नं० ४७४—श्रमंन संघपालस भर्य तय त्रिये न मुकेषी न लोतये निते पुत्र धित्रसमभग कर्तंतो यति·······

चीनी तुर्किस्तान के भिक्षु पारिवारिक जीवन बीताते थे, फलतः भिक्षुओं के पुत्र और पुत्री का उल्लेख विभिन्न लेखों में मिलता है। लेख नं० ४१९ में बुधिल और बुधय

पुत्र और पुत्री

श्रमण अठमो के पुत्र बताए गए[१]। पुनः श्रमण संघपाल के पुत्र और पुत्री का उल्लेख है। लेख नं ४७४ बुधोस भिक्षु बुधशिर का पुत्र था लेख नं० ६५५। भिक्षु बुद्धवर्मा की पुत्री भिक्षु जिवलो अठम की पत्नी हुई नं० ४१८। भिक्षु संघपाल के पुत्र और पुत्री का उल्लेख मिलता है नं० ४७४। भिक्षु सुन्दर की कन्या का विवाह एक कुम्हार के पुत्र से हुआ नं० ६२१। बौद्ध भिक्षुओं के गृहस्थ जीवन का यह उदाहरण मध्यएशिया के जीवन के सामान्य स्तर से भिन्न रूप दीखता है।

लेख के प्रसंग भिक्षु सारिपुत्र द्वारा कन्या गोद लिए जाने का उल्लेख करते हैं लेख नं० ४१८[२]। भिक्षु बुद्धमित्र ने पत्रप नामक बालक को दूध के मूल्य पर कुठिब्र गोद लिया।

भिक्षु की कन्या की बिक्री का उल्लेख भी एक लेख से मिलता है। लेख के अनुसार भिक्षु बुद्धसेन ने ५ दिष्ट ऊंची कन्या को ४५ मुली के मूल्य पर खरीदा[३]।

चीनी तुर्किस्तान के समाज में भिक्षु सम्पत्ति भी रखते थे। जगह-जमीन के क्रय-विक्रय से सहज ही ऐसा अनुमान होता है। राजा अंगोक के राज्य काल में भिक्षु घमलव ने प्लित्ग को जमीन का कुछ भाग बेचा, मूल्य में उसे शराब और बुनी

१—लेख नं० ४१९—श्रमंन अठमोयस पुत्रन बुघिल मिति बुघयस च उथिदति मसु शड अपचिर....

२—लेख नं० ४१८—"छुनंमि श्रमंन बुधवम मंत्रेति यथ श्रमंन शरिपुत्रेन देमुग अतोस वरिदे घितु"

३—लेख नं० ४३७—पंच तिठि कुड़िए विक्रितंति श्रमंन बुवसेन....

हुई चीजें (Textile goods) मिलीं[1]। राजा पेपिये के राज्य काल में भिक्षु बुधशिर और उसके पुत्र बुधोश ने अंगूर और मिसी जोती हुई जमीन दूसरे भिक्षु को बेचा[2]।

भिक्षुओं के परिवार के अन्तर्गत दासों का भी उल्लेख है। संघ और राज्य की ओर से दास रखने में भिक्षुओं को कोई रुकावट नहीं थी। लेख नं ३४५ से ज्ञात होता है कि भिक्षु आनन्दसेन के पास बुद्धघोष नाम का एक दास था। भिक्षु स्वयं भी दास का कार्य करते हुए लेखों में मिलते हैं।

खरोष्ठी लेख भिक्षुओं को दोषी के रूप में भी दिखाते हैं, जिसके फलस्वरूप उन्हें न्यायालय में साधारण व्यक्ति की भाँति जाना होता था। उदाहरण स्वरूप कुछ भिक्षुओं ने एक मजदूर रखा, एक महीने तक उस मजदूर से काम लेने के पश्चात् उन भिक्षुओं ने बिना उसे उसके कार्य का पारिश्रमिक दिए ही, उसे काम से छुड़ा दिया, इस अभियोग की सूचना न्यायालय में भेजी गई[3]। पुनः लेख से ज्ञात है कि भिक्षु संघपाल ने वधुशुल्क न देकर एक कन्या से विवाह किया, यह विधान के विपरीत था। अतः इसके लिये न्यायालय की शरण लेनी

१—लेख नं० ६५२—"श्रमंन धमलघ नम से विक्रिद सुम एक मिलिमि तिविर ल्पिपंगस वंति गिड मुति मसु ति १० अगिष्ट ३ सुघ ल्वगद अजछुन उवदए ...''

२—लेख नं० ६५५

३—लेख नं० ३८६—"श्रमंनि मोचप्रि संगरथस च मनुंश...तंति एक मस कमवितंति पुन पत म ओडितंति एद विवद समुह अ न पुछिदवो यव धमेन निचे कर्तव्य....''

पड़ी[१]। भिक्षुसंघ के नायकों की अशिष्टता का भी उल्लेख है। विह्वखल नामक एक बिहार का संचालक बहुत ही क्रूर एवं कठोर था। इस प्रकार चीनी तुर्किस्तान के बौद्ध भिक्षुओं की साधारण कमजोरियाँ उनके जीवन के स्तर का परिचय देती हैं, किन्तु यह भी नहीं कह सकते कि चीनी तुर्किस्तान के बौद्ध-भिक्षु, बौद्ध धर्म के उद्देश्य से विरक्त थे। आत्मशुद्धि और मोक्ष का पथ भिन्न होते हुए भी संभव है कि वहाँ के भिक्षुगण किसी एक विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ही भिक्षु होते हों।

सामान्य लोगों की भांति भिक्षुओं के विभिन्न कार्यों का उल्लेख है। राजकीय कार्यों में भिक्षुओं की नियुक्ति का उल्लेख लेखों से मिलता है। भिक्षु संघप्रिय लेख नं० २५२ यप्गु लेख नं० ४७७ और भिक्षु सोतय लेख नं० ५४७ कर के रूप में प्राप्त अनाज इकट्ठा करने वाले थे। लेख नं० ५७५ के अनुसार राजा मयिरि के राज्य काल में भिक्षु धर्मप्रिय राज्य का लेखक नियुक्त किया गया।

परिवार और सम्पत्ति होने के कारण भिक्षु खेती और पशु पालन का कार्य भी करते थे। भिक्षु धर्मप्रिय ने एक ऊँट की खरीद एक व्यक्ति के मूल्य पर की। न्यायाधीश के सम्मुख यितग व्यक्ति को ऊँट के बदले भेजा गया[२]।

भिक्षुओं के प्रार्थना पत्र लिखने के कार्य का उल्लेख भी लेखों में मिलता है। दूत और वाहक के रूप में भी भिक्षुओं को कार्य करने का उदाहरण है।

१—लेख नं० ४७४—श्रमंन संगफलस मर्य तय स्रियए न मुकेपी न लोतेय नितए

२—लेख नं० ५७५

साधन की सीमा के कारण चीनी-तुर्किस्तान के समाज का यह आंशिक चित्रण होते हुए भी उपयोगी हो, ऐसी कोशिश की गयी है। समाज के विभिन्न पहलुओं का जो चित्रण है, उनमें भारत और चीन की प्राचीन संस्कृतियों का प्रभाव स्पष्ट है। चीनी तुर्किस्तान के वे क्षेत्र जो आज मरुभूमि दिखाई पड़ते हैं, सदियों पूर्व सभ्यता और संस्कृति के सक्रिय केन्द्र थे।

ग्रन्थ-सूची

१—अग्रवाल, आर० सी० — न्यूमिसमैटिक डेटा इन द निया खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम सेन्ट्रल एशिया, जे० एन० एस० आई० १९५४ पृष्ठ २१६-३० ।

२— ,, ,, — न्यूमिसमैटिक डेट इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम चाइनीज तुर्किस्तान, जे० एन० एस० आई० १९५३ पृष्ठ १०३-६ ।

३— ,, ,, — पोजिशन आफ स्लेवस् एन्ड सरफस् ऐज डेपिक्टेड इन द खरोष्ठी डाक्यू-मेन्ट्स् फ्राम चाइनीज तुर्किस्तान, आई० एच० क्यू १९५३, पृष्ठ ९७-११० ।

४— ,, ,, — ए स्टडी आफ वेट्स मेज़रस् इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान, जे० बी० आर० एस० पृष्ठ ३३५ ।

५— ,, ,, — पोजिशन आफ वीमेन एज डेपिक्टेड इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान, आइ० एच० क्यू० १९५२ ।

६— ,, ,, — फार्म आफ टैक्सेशन ऐज डेपिक्टेड इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान, आइ० एच० क्यू० १९५३ पृष्ठ ३४०-५३ ।

७— अग्रवाल, आर० सी० एस्टडी आफ टेक्सटाइल एन्ड गारमेन्टस् ऐज डेपिक्टेड इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम चाइनीज तुर्किस्तान, १९५३, पृष्ठ ७५-९४।

८— ,, ,, लाइफ आफ मोन्कस् एन्ड सर्फस् एज डेपिक्टेड इन खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान, सरूप भारती विश्वेश्वरानन्द, वैदिक रिसर्च ईन्सिटी-च्यूट, होशियारपुर १९५४, पृष्ठ १७३-८१।

९—अलतेकर, ए० एस० पोजिशन आफ वीमेन इन हिन्दु सीवि-लाइजेशन, बनारस १९३८।

१०—बागची, पी०सी० इन्डिया एण्ड चाइना, बम्बई १९४४।

११— ,, ,, इन्डिया एन्ड सेन्ट्रल एशिया, कलकत्ता १९५५।

१२—बेली, एच०डब्लू० इरानो-इण्डिका, बी० एस० ओ० एस० १९४९-५० पृष्ठ १२१-३९। और पृष्ठ ९२०-९३८।

१३— ,, ,, गान्धारी, बी० एस० ओ० एस० १९४३-४६ पृष्ठ ७६४-९७।

१४— ,, ,, द खोतान धर्मपद, बी० एस० ओ० एस० पृष्ठ ४३-४६ और पृष्ठ ४८८-५१२।

१५—बील, एस०, बुद्धिस्ट रेकर्ड आफ द वेस्टर्न वर्ल्ड। भाग, १, २।

१६—ट्रेवलस आफ फा-ह्यान एण्ड सुंग-युन, लंदन, १८६८।

१७—बोयर, ए० एम० रेप्सन, ई० जे० और सेनार्ट — खरोष्ठी इन्सक्रिपशनस् डीसकवर्ड बाय सर ए० स्टाईन इन चाइनीज़ तुर्किस्तान, भाग १ आक्सफोर्ड १९२० ।

१८— „ „ — खरोष्ठी इन्सक्रिपशनस् डीसकवर्ड बाय सर ए० स्टाईन इन चाइनीज़ तुर्किस्तान, भाग २, आक्सफोर्ड १९२७ ।

१९—ब्राउह्र जें० — लिजेन्डस आफ खोतान एन्ड नेपाल, बी० एस० ओ० एस० १९४७-४८, पृष्ठ ३३३-३९ ।

२०—वरो, टी० — ए ट्रान्सलेशन आफ द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान, लन्दन १९४० ।

२१— „ „ — द लैंग्वेज आफ द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम द चाइनीज़ तुर्किस्तान कैम्ब्रीज, १९३७ ।

२२— „ „ — द डाइयलेक्टिक पोजिशन आफ द निया प्राकृत बी० एस० ओ० एस० १९३५-३७ पृष्ठ ४१९-३६ ।

२३— „ „ — इरानियन वर्ड्स इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान बी० एस० ओ० एस० १९३४, पृष्ठ ५०९-१६ और पृष्ठ ७७९-९० ।

२४— „ „ — तोखारियन एलिमेन्ट्स इन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स् फ्राम चाइनीज़ तुर्किस्तान, जे० आर० ए० एस० १९३५ पृष्ठ ६६७-७९ ।

२५—बरो, टी० फरदर खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स फ्राम निया, बी० एस० ओ० एस० १९३७-३९ पृष्ठ १११-२३

२६—दत्त, एन० एन० अर्ली मोनस्टिक् बुद्धिज़म्, कलकत्ता, १९४१ भाग १ पृष्ठ २८९-९१।

२७—दत्त, धीरेन्द्र मोहन और चट्टोपाध्याय, सतीशचन्द्र, भारतीय दर्शन, हिन्दी रूपकार, श्री हरिमोहनझा, श्रीनित्यानन्द मिश्र, पटना।

२८—घुर्ये, जी० एस० कास्ट एन्ड रेस इन इण्डिया, लन्दन १९३२।

२९—गाहल्स, एल० डेटेड चाइनीज़ मैन्यूसक्रिप्ट इन द स्टाईन क्लेक्शन बी० एस० ओ० एस० १९३५-३७ पृष्ठ १-२६।

३०—ग्रान्ट, एम० चाइनीज़ सिवीलाइजेशन, लन्दन १९३०।

३१—चट्टोपाध्याय सतीशचन्द्र, दत्त धीरेन्द्र मोहन भारतीय दर्शन, पटना।

३२—काने, पी० वी०, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र १, २, ३, पूना, १९४१।

३३—कौटिल्य अर्थशास्त्र, आर० शामाशास्त्री द्वारा प्रकाशित और अनूदित, मैसूर १९२९।

३४—कौटिल्य अर्थशास्त्र।

३५—कोनो, स्टेन — नोट आन द एन्सियन्ट नोर्थ वेस्टर्न प्राकृत, बी० एस० ओ० एस० १९३५-३७ पृष्ठ ६०३-१२।

३६— „ „ — स्तेतर एन्ड द्रख्म इन ओल्ड खरोष्ठी इन्सक्रिपशन्स, एक्टा० ओ० १९२८, पृष्ठ २५५-५६।

३७— „ „ — नोट आन ए खरोष्ठी अत्तर, बी० एस० ओ० एस० १९३०-३२ पृष्ठ ४०५-१०।

३८— „ „ — नोट आन ए खोतानी सक एन्ड द सेन्ट्रल एशिया प्राकृत अेक्टा० ओ० १९३६ पृ० २३१-४०

३९—लेंग, ओ० — चाइनीज फेमली एण्ड सोसायटी, न्यू-हेवन, १९४६।

४०—लुडर्स, एच, जुर — ख्रिफ्ट उण्ट स्प्राखे डर खरोष्ठी डाकूमेण्ट, बी० एस० ओ० एस० (८) १९३५—३७, पृ० ६३७-५६।

४१—मोतीचन्द, — प्राचीन भारतीय वेश-भूषा, प्रयाग।

४२—मेकगवर्न, डब्लू० एस० — द अर्ली इम्पायरस आफ सेन्ट्रल एशिया, चपेल हिल, द यूनिवर्सिटी आफ नोर्थ, करोलिना प्रेस, १९३९।

४३—नारायण ए० के० — द इन्डो ग्रीक, आक्सफोर्ड, १९५७।

४४—नोबले, पी० एस० — ए खरोष्ठी इन्सक्रिपशन फ्राम इन्देरे, बी० एस० ओ० एस० १९३०-३२ पृ० ४४५-५६।

४५—पांडे आर० बी० — हिन्दू संस्कार बनारस १९४९।

४६—प्रभु, पी० एन० हिन्दू सोशल औरगनाईजेशन, बम्बई १९४० ।

४७—रेप्सन ई० जे० नोबले, पी० एस० खरोष्ठी इन्सक्रिप्शनस् डिसकवर्ड बाय सर ए० स्टाईन इन चाइनीज तुर्किस्तान भाग ३ आक्सफोर्ड १९२९ ।

४८—सांकृत्यायन राहुल बौद्ध संस्कृति, कलकत्ता १९५२ ।

४९—सरकार डी० सी० सेलेक्ट इन्सक्रिपशन बीयरिंग आन इन्डियन हिस्ट्री ऐन्ड सीविलाइजेशन भाग १ कलकत्ता १९४२ ।

५०—स्टाईन, एम० ए० आर्क्योलोजिकल डिसकवरी इन द नेवर-हुड आफ द निया रिवर, जे० आर० ए० एस० १९०१ पृ० ५६९-७२ ।

५१— " " आर्क्योलोजिकल वर्क अबाउट खोतान, जे०आर०ए०एस० १९०१ पृष्ठ २९५-३०० ।

५२—स्टाईन, ए० एंशियन्ट खोतान भाग १ आक्सफोर्ड १९०७ ।

५३— " " सेरिन्डिया भाग १, २, ३ आक्स-फोर्ड १९२१ ।

५४—स्टेन एन्सियन्ट मैन्यूसक्रिप्ट फ्राम खोतान, जे० आर० ए० एस० १९०६ पृ० ६९५ ।

५५—थामस, एफ० डब्लू० सम नोट आन सेन्ट्रल-एशियन खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट बी० एस० ओ० एस०, १९४३-४६ पृ० ५१३-४० ।

५६—थामस, एफ० डब्लू० — सम नोट्स आन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट फ्राम चाइनीज तुर्किस्तान, ऐक्टा ओ० १९३४ पृ० ३७-९० ।

५७— ” ” — टू टर्मस् इम्पलायड इन खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट फ्राम चाइनीज तुर्किस्तान बी० एस० ओ० एस० १९३०-३२ पृष्ठ ५१६-२८ ।

५८— ” ” — सम वर्डस फाउन्ड इन द सेन्ट्रल एशियन डाक्यूमेन्ट्स, बी० एस० ओ० एस० १९३५-३७ पृष्ठ ७८९-९४ ।

५९— ” ” — सम नोट्स आन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्टस् ऐक्टा ओ० पृ० ७१ ।

६०— ” ” — सम नोट्स आन द खरोष्ठी डाक्यूमेन्ट्स, ऐक्टा० ओ० पृष्ठ ६३ ।

६१—बेदालंकार चन्द्रगुप्त, — बृहत्तर भारत, गुरुकुल विश्वविद्यालय, १९३९ ।

६२—बालावालकर पी० एच० — हिन्दू सोशल इन्सटीच्यूशन, मद्रास १९३९ ।